Con. 3. XI.8.49
320

अंक 11
संख्या 8

मंगलवार
22 नवम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा–(जारी) 3929–3996

भारतीय संविधान सभा

———————

मंगलवार, 22 नवम्बर, सन् 1949 ई.

———————

भारतीय संविधान-सभा, कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः दस बजे अध्यक्ष महोदय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

———————

संविधान का मसौदा–(जारी)

***श्री एच.वी. कामतः** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, कुछ दिन पूर्व आपने कृपा करके सभा को बताया था कि विंध्य प्रदेश से संविधान सभा के लिये सदस्य इस महीने की बीस तारीख को चुने जायेंगे। क्या आप कृपा करके हमें बतायेंगे कि क्या निर्वाचन हो गया है और क्या यह सदस्य इस सभा में इस सत्र में ही आ जायेंगे?

***अध्यक्षः** मैं उनकी प्रतीक्षा कर रहा हूं किन्तु उनका निर्वाचन नहीं होगा। जैसा कि मैं सभा को पहले बता चुका हूं, एक निर्वाचक-मंडल बनाने का प्रयास किया गया था, किन्तु किसी कारण वह स्थापित नहीं किया जा सका। अन्त में मुझसे कहा गया कि आप उन्हें मनोनीत करने के लिये सहमत हो जाइये और मैं सहमत हो गया। मैं मनोनीत सदस्यों की प्रतीक्षा कर रहा हूं।

***श्री जयनारायण व्यास** (संयुक्त राज्यः राजस्थान): मुझे ज्ञात हुआ है कि दो सदस्य यहां पहुंच गये हैं।

***अध्यक्षः** यदि वे आ गये हैं तो वे इस सभा में भी आयेंगे।

***श्री जयनारायण व्यासः** उन्हें राजप्रमुख से परिचय-पत्र प्राप्त नहीं हुए हैं। इसी कारण वे नहीं आ पाये हैं।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): मैंने कल के समाचार पत्र में पढ़ा था कि आपने विंध्य प्रदेश से इस सभा के लिये चार व्यक्तियों को मनोनीत किया है।

***अध्यक्षः** मैंने मनोनीत नहीं किया है।

***श्री एच.जे. खांडेकर:** जी नहीं क्षमा कीजिये, वे राजप्रमुख ने मनोनीत किये हैं। क्या मुझे यह सूचना दी जा सकती है कि उनमें कोई हरिजन भी है या नहीं?

***अध्यक्ष:** हमें यह नाम प्राप्त हुए हैं। मैं कह नहीं सकता कि उनमें से कोई हरिजन है या नहीं।

नाम इस प्रकार हैं:

(1) कैपटेन अवधेश प्रताप सिंह,

(2) श्री शम्भुनाथ शुल्क,

(3) पंडित राम सहाय तिवाड़ी, और

(4) श्री मन्नूलालजी द्विवेदी।

जी नहीं; मेरे विचार से इनमें से कोई भी हरिजन नहीं है।

***श्री एच.जे. खांडेकर:** उपनामों के आधार पर भी मैं कह सकता हूं कि कोई हरिजन नहीं है।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या अगले सत्र तक हैदराबाद राज्य का संविधान सभा में प्रतिनिधित्व करने के लिये कोई प्रयास किया जा रहा है अथवा क्या किया जायेगा?

***अध्यक्ष:** मैं कह नहीं सकता। जब तक हैदराबाद भारत में समाविष्ट नहीं होता और इस सभा में अपने प्रतिनिधि भेजने के लिये तैयार नहीं होता तब तक मैं कोई प्रयास नहीं कर सकता।

***श्री एच.वी. कामत:** समाचार पत्रों ने यह समाचार प्रकाशित किया था कि हैदराबाद जल्दी ही भारत में समाविष्ट होने जा रहा है।

***अध्यक्ष:** मुझे विदित नहीं है।

क्या मैं माननीय सदस्यों के सामने यह सुझाव रख सकता हूं कि उनमें से प्रत्येक व्यक्ति दस मिनट से अधिक समय न ले क्योंकि बहुत से सदस्य बोलना चाहते हैं और अधिकांश विषयों की चर्चा सदस्य कर चुके हैं। इसलिये जो भाषण अब दिये जायेंगे उनमें बहुत कुछ पहले की ही बातें दुहराई जायेंगी। इसलिये माननीय सदस्यों से मेरा निवेदन है कि उनमें से प्रत्येक वक्ता यदि हो सके तो दस मिनट में अपना भाषण समाप्त कर दे।

***बेगम ऐजाज रसूल** (संयुक्त प्रान्त: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज एक पवित्र तथा शुभ दिवस है क्योंकि आज संविधान सभा ने स्वतन्त्र भारत के लिये एक संविधान बनाने का महान कार्य समाप्त किया है और वह भी एक ऐसा संविधान बनाने का कार्य जिसमें भारतीयों की आशाएं तथा आकांक्षाएं मूर्तिमान हुई हैं। यदि किसी संविधान को उसकी पदावलियों तथा उपबन्धों से जांचा जा सकता है तो यह संविधान अवश्य ही संसार के संविधानों में बहुत

ऊंचा स्थान प्राप्त करेगा और मेरे विचार से यह सर्वथा उचित ही है कि हम इस पर गर्व करें। डॉ. अम्बेडकर तथा मसौदा समिति के सदस्यों ने जो अद्‌भुत कार्य किया है उसके लिये मैं उन्हें बधाई देती हूं और अध्यक्ष महोदय, आपने जिस धैर्य और योग्यता से इस सभा की कार्यवाही का संचालन किया है उसके लिये आपको धन्यवाद देती हूं। संविधान सभा के कर्मचारियों ने जो कठिन कार्य तथा अथक परिश्रम किया है उसके लिये हम उन्हें भी धन्यवाद देते हैं।

श्रीमान, संविधान में सबसे अधिक महत्व इसका है कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य होने जा रहा है। यह संविधान इस कारण एक पवित्र संविधान है कि इसमें धर्मनिरपेक्षता का समर्थन किया गया है। हमें इस का गर्व है। मुझे पूरा विश्वास है कि धर्मनिरपेक्षता की सदा रक्षा की जायेगी और इस पर कलंक नहीं लगने दिया जायेगा क्योंकि इसी पर भारत के लोगों का अखंड ऐक्य निर्भर है और बिना इसके उन्नति की सभी आशाएं विफल हो जायेंगी।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, चूंकि हमारा देश एक लोकतन्त्रात्मक गणराज्य है इस लिये संविधान में इस सम्बन्ध में उपबन्ध रखे गये हैं कि सभी नागरिक व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से लोकतंत्र का सर्वोत्तम रूप से उपभोग करेंगे और उन्हें यह आश्वासन दिया गया है कि उन्हें वे आधारभूत जीवनोचित दशाएं तथा स्वतंत्रताएं प्राप्त होगीं जिनके कारण ही जीवन सार्थक, सुरक्षित तथा उपयोगी होता है। यद्यपि ये मूलाधिकार कई शर्तों और परन्तुकों से परिसीमित किये गये हैं किन्तु फिर भी श्रीमान, मेरे विचार से उनके द्वारा प्रत्येक नागरिक को उस स्वतंत्रता की प्रत्याभूति दी गई है जो उसके व्यक्तित्व के पूर्ण तथा अबाध विकास के लिये आवश्यक है। ये अधिकार न्याय्य भी हैं क्योंकि जब हमने मूलाधिकारों के सिद्धान्त को स्वीकार किया तो हमारे किये उन्हें न्याय्य बनाना भी आवश्यक था। संविधान में इन मूलाधिकारों को इस सिद्धान्त के आधार पर स्थान दिया गया है कि चाहे कोई भी सरकार शासनारूढ़ क्यों न हो प्रत्येक मनुष्य को कुछ अधिकार प्राप्त हैं। न्यायालय इसकी देखरेख करते रहेंगे कि कहीं सरकारी निकाय अर्थात विधान-मंडल अथवा कार्यपालिका कहीं इनमें हस्तक्षेप तो नहीं करते।

अनुच्छेद 14 से लेकर 28 तक में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक समता का तथा अवसर समता का आश्वासन दिया गया है और यह कहा गया है कि जाति, धर्म अथवा लिंग के आधार पर विभेद का प्रतिषेध होगा। अनुच्छेद 29 तथा 30 द्वारा अल्पसंख्यकों को उनकी भाषा, लिपि तथा संस्कृति की सुरक्षा का आश्वासन दिया गया है। मुझे आशा है कि अनुच्छेद 29 को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रयोग में लाया जायेगा और जहां कहीं बच्चों को प्राथमिक शिक्षा अपनी मातृभाषा में देने की मांग तर्क-संगत ढंग से की जायेगी वहां उन्हें अपनी मातृभाषा में ही प्राथमिक शिक्षा दी जायेगी।

किन्तु श्रीमान, मुझे खेद है कि संविधान में सम्पत्ति विषयक अनुच्छेद 31 को प्रविष्ट किया गया है, जो बहुत ही अनुचित तथा अन्यायपूर्ण है। नगर-निर्माता जैसे नगर को सभी कालों के लिये बनाते हैं वैसे ही संविधान निर्माता भी संविधान

[बेगम ऐजाज रसूल]

को सभी कालों के लिये बनाते हैं और उसमें सार्वभौमिक सिद्धान्तों का सन्निवेश करते हैं। संविधान में किसी एक दल, किसी एक समूह अथवा किसी एक प्रान्त के पक्ष में उपबन्ध नहीं रखे जाने चाहिये। यह खेद की बात है कि अनुच्छेद 31 के उपबन्ध इस कसौटी से खरे नहीं उतरते और वास्तव में वे कुछ प्रान्तों में एक दल-विशेष के कार्यक्रम को कार्यान्वित करने में सुविधा पैदा करने के लिये रखे गये हैं। उनमें संयुक्त प्रान्त, बिहार और मद्रास के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों में जमींदारी उन्मूलन के सम्बन्ध में विभेद किया गया है और कृषि सम्पत्ति तथा औद्योगिक सम्पत्ति में भी विभेद किया गया है। इन प्रान्तों में कृषि सम्पत्ति के सम्बन्ध में न्याय्य अधिकारों का अपहरण किया गया है। यह एक अजीब उपबन्ध है और इसके कारण एक सुन्दर चित्र में धब्बा लगता है।

श्रीमान, इस देश के निवासियों को वयस्क मताधिकार प्रदान करके एक बहुत बड़ा कदम उठाया गया है। परन्तु चूंकि इस देश के अधिकांश लोग अशिक्षित हैं इस लिये यह प्रणाली तभी सफल हो सकती है जब भारतवासियों को नागरिकता की शिक्षा देने के लिये तुरन्त ही प्रभावपूर्ण कदम उठाये जायेंगे।

श्रीमान भारत की महिलाओं को इसकी प्रसन्नता है कि कार्य तथा जीवन के सभी क्षेत्रों में उन्हें पुरुषों के समान ही अधिकार दिये गये हैं। यह मैं इस लिये नहीं कह रही हूं कि संविधान में यह कोई नवीन बात है बल्कि इस लिये कह रही हूं कि बहुत काल तक भारत ने इस आदर्श का अनुसरण किया है यद्यपि कुछ काल तक ऐसी सामाजिक स्थिति उत्पन्न हो गई कि व्यवहार में बिल्कुल इसके विपरीत आचरण होने लगा। संविधान में इसी आदर्श को सामने रखा गया है और यह पवित्र आश्वासन दिया गया है कि भारतीय गणराज्य की विधि के अधीन महिलाओं के अधिकारों की पूर्ण रक्षा की जायेगी।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, संविधान के सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा ऐतिहासिक विशेषताओं में से एक विशेषता यह भी है कि अल्पसंख्यकों के लिये अब स्थान सुरक्षित नहीं रखे जायेंगे। मुझे इस की प्रसन्नता है कि मुझे सभा को यह सूचित करने का अवसर मिला है कि जैसा कि मैंने इस संविधान के प्रथम पठन के अवसर पर कहा था, मैं आरम्भ से ही इस विचार-धारा का समर्थन करती चली आई हूं कि इन स्थानों को सुरक्षित नहीं रखना चाहिये। इन सुरक्षित स्थानों को हटाने में मैंने भी हाथ बटाया और अपने उत्तरदायित्व को पूर्णतया समझ कर हाथ बटाया और वह इस कारण कि मेरा पूरा विश्वास है कि धर्म पर आधृत किसी अल्पसंख्यक समुदाय के लिये साम्प्रदायिक आधार पर स्थानों के रक्षण की मांग करके पृथक्करण की भावना बनाये रखना आत्मघात के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा। वास्तव में भले ही अल्पसंख्यक अपने को बहुसंख्यक समुदाय से पृथक रखने के लिये एक दीवार खड़ी कर लें किन्तु उससे उनकी कुछ भी रक्षा नहीं हो सकती। इससे उन का समुदाय बिल्कुल ही पृथक समुदाय हो जायेगा और देश के अन्य समुदायों के निकट नहीं आ सकेगा। मुझे आशा है कि स्थानों के रक्षण की व्यवस्था को समाप्त करके हमारी वे कठिनाइयां तथा भ्रम भी मिट जायेंगे

जिनके कारण कुछ वर्षों से हमारा सार्वजनिक जीवन दूषित रहा है। श्रीमान, मैं उस दिन की प्रतीक्षा कर रही हूं जब कि लोग अपने को धार्मिक अल्पसंख्यक समुदायों के सदस्य नहीं समझेंगे। किन्तु अध्यक्ष महोदय, यह तभी सम्भव हो सकेगा जब बहुसंख्यक समुदाय के सदस्य भी अपने को बहुसंख्यक नहीं समझें और सभी समुदायों के सदस्य, चाहे वे अल्पसंख्यक हों या बहुसंख्यक अपने को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के पूर्ण तथा समान अधिकार प्राप्त नागरिक समझें।

हमारे संविधान की एक अन्य विशेषता यह है कि यह सारे भारत में, जिसमें वे क्षेत्र भी सम्मिलित हैं जो अभी तक देशी राज्य कहे जाते थे, प्रयोग में आयेगा। सरदार बल्लभभाई पटेल की विलक्षण प्रतिभा के कारण ही यह सम्भव हो सका है जिन्होंने हैदराबाद और भूपाल जैसे राज्यों के अड़े रहने पर भी हमारे देश में पूर्णतया अहिंसात्मक ढंग से अल्प काल में ही एकता स्थापित कर दी है। हमें आशा है कि तुरंत ही हमें इस सभा में हैदराबाद के चुने हुए प्रतिनिधियों का स्वागत करने का अवसर प्राप्त होगा।

श्रीमान, मैं यह कहूंगी कि जब प्रधान मंत्री ने आधुनिक संसार के सबसे बड़े अधिक शक्तिशाली लोकतंत्र की संसद में भाषण देते हुए भारत के संविधान की ओर संकेत किया तथा उससे उद्धरण दिये तो हमें बहुत गर्व हुआ। उनके इस कदम से संविधान में सन्निहित लोकतंत्रात्मक व्यवस्था का समर्थन हुआ है। श्रीमान, जिस भावना से किसी संविधान को प्रयोग में लाया जाता है उसी से उसका मूल्य आंका जाता है। उसे जिस ढंग से व्यवहार में लाया जाता है उससे उसका मूल्यांकन होता है। इसके अतिरिक्त सभी संविधानों का अन्तिम लक्ष्य मनुष्यों के सुख तथा कल्याण की अभिवृद्धि करना तथा किसी देश के विभिन्न तत्वों को एक सूत्र में बांध कर उन्हें एक राष्ट्र में परिणत करना ही है। हमारा देश एक महान देश है और उसका भविष्य बहुत उज्ज्वल है। मुझे आशा है कि यह संविधान इस प्रकार व्यवहार में लाया जायेगा कि इससे मातृभूमि की प्रतिष्ठा बढ़ेगी और हमारी मातृभूमि इतनी शक्तिशालिनी हो जायेगी कि संसार के सभी राष्ट्रों के बीच एकता तथा शान्ति स्थापित कर सकेगी। मैं इसके लिये प्रार्थना करती हूं। श्रीमान, मैं डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव का समर्थन करती हूं।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आरम्भ में ही आप की प्रशंसा में जो कुछ कहा गया है उसकी मैं प्रशंसा करता हूं। विशेषता श्री मैत्र, मि. नज़ीरुद्दीन अहमद तथा पंडित ठाकुरदास भार्गव ने आपकी प्रशंसा में जो कुछ कहा है उसका मैं स्मरण कराता हूं। मैं इस सभा के विभिन्न सदस्यों को बधाई देने में अधिक समय नहीं लगाना चाहता। उन्होंने बड़ी दिलचस्पी से कार्य किया और अपनी सारी बुद्धि खर्च की...

***एक माननीय सदस्य:** अपनी सारी बुद्धि?

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** सारी बुद्धि नहीं तो बहुत अधिक बुद्धि खर्च की है और एक संतोषजनक संविधान के निर्माण के लिये कठिन परिश्रम किया।

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

इस संविधान में हमने एक संसदात्मक लोकतंत्र का समावेश किया है। यह इंग्लिस्तान के संविधान के ढंग का संसदात्मक लोकतंत्र है। यद्यपि हमने संसदात्मक प्रभुत्ता को अंगीकार नहीं किया है और यद्यपि हमने संसद की प्रभुता में कई प्रकार हस्तक्षेप किया है और वह इस प्रकार कि हमने मूलाधिकारों को तथा इसी प्रकार के अन्य विषयों को समाविष्ट किया है, जैसे कि हमने इसका उल्लेख किया है कि अमुक व्यक्तियों को अमुक वेतन दिये जायेंगे किन्तु फिर भी हमने अमरीका के संविधान की अपेक्षा इंग्लिस्तान के संविधान का अधिक अनुकरण किया है। जहां तक हमारे संविधान के अमरीका के संविधान के समान होने का सम्बन्ध है, केवल नामों में ही समानता है और उन सारवान शक्तियों में कोई समानता नहीं है जो हमने संविधान द्वारा विभिन्न पदाधिकारियों को अथवा प्रतिष्ठित व्यक्तियों को प्रदान की हैं।

इस संविधान का एक महान गुण यह है कि इस देश के निवासी एक ऐसे संविधान को अपनाने जा रहे हैं। जिससे वह पिछले दस या बारह वर्ष तक परिचित रहे हैं। केन्द्र के उत्तरदायित्व विषयक उपबन्धों को छोड़कर अन्य उपबन्धों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह संविधान बहुत कुछ 1935 के अधिनियम के समान ही है। मैं यह उस की निन्दा की दृष्टि से नहीं कह रहा हूं। मैं इसे उसका गुण मानता हूं न कि दोष क्योंकि लोगों को संविधान को समझने में अधिक कठिनाई नहीं होगी। गवर्नर अथवा राज्यपाल रखे ही गये हैं और गवर्नर जनरल का नाम बदल कर प्रेजीडेंट अथवा राष्ट्रपति कर दिया गया है। साथ ही 1935 के अधिनियम का ढांचा ज्यों का त्यों रखा गया है। एक महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है और मुझे आशा है कि उसके कारण इस देश के लोगों की सामाजिक तथा राजनैतिक स्थिति में बहुत अन्तर हो जायेगा। यह महत्वपूर्ण परिवर्तन लोगों को वयस्क मताधिकार प्रदान करना ही है। इस के अतिरिक्त संविधान में शायद ही कोई ऐसी बात मिलेगी जिसके कारण लोगों में उत्साह उत्पन्न हो सकता है। किन्तु यह वयस्क मताधिकार एक ऐसी बात है जिससे विभिन्न विधान मंडलों के वर्तमान प्रतिनिधित्व में बहुत परिवर्तन हो जायेगा। यद्यपि शासन-व्यवस्था पहले के समान ही रहेगी किन्तु मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि भारत के जनसाधारण को पहले की अपेक्षा अधिक शक्ति प्राप्त हो जायेगी और वे इस शक्ति को देश के हितसाधन के लिये प्रयोग कर सकेंगे। संविधान को दो दृष्टिकोणों से देखने पर मुझे वह असंतोषजनक ही प्रतीत होता है। पहले यदि हम उसकी एक शक्तिशाली राष्ट्र के निर्माण की दृष्टि से परीक्षा करें तो हमें विदित होगा कि हमने संगठन की कई ऐसी शक्तियों की उपेक्षा की है जो सभी समाजों और राष्ट्रों के लिये उपयोगी सिद्ध हुई हैं और जो हमारे लिये भी उपयोगी सिद्ध हो सकती थी उदाहरणार्थ संगठन की एक शक्ति धर्म भी है। मेरे विचार से इस संसार में भारत के समान अधार्मिक और कोई देश नहीं है। इस बहाने से अथवा इस आधारभूत सिद्धान्त के कारण कि हम अपने संविधान को एक धर्मनिरपेक्ष संविधान बनाना चाहते थे, हमने अपने संविधान में धर्म की परछाई तक नहीं पड़ने दी है। मैं स्वयं को बहुत अधिक धार्मिक व्यक्ति नहीं हूं किन्तु मेरे विचार से प्रत्येक समाज के जीवन में, तथा कई राज्यों के प्रशासन में, धर्म का एक निश्चित स्थान रहा है और अवश्य ही रह भी सकता है। यदि हम संसार के सबसे उत्कृष्ट

धर्म अर्थात हिन्दू-धर्म को स्थान देते तो मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं होती, यदि हमने यह भी घोषित किया होता कि हमारा राज्य हिन्दू राज्य होगा तो मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी संदेह नहीं है कि हमारा संविधान हमारी इच्छानुसार धर्मनिरपेक्ष ही रहता। इसका कारण यह है कि हिन्दुस्तान की अपेक्षा संसार में अन्य कोई धर्म अधिक ऐहिक नहीं है *(वाह वाह)*। यदि मुझे इसकी स्वतंत्रता होती तो मैं भावी भारतीय राष्ट्र के निर्माण के लिये तथा उसे सुदृढ़ बनाने के लिये अपने पूर्वजों से प्राप्त धर्म का उपयोग करता।

एक अन्य दृष्टिकोण से भी मुझे यह संविधान दोषपूर्ण दिखाई देता है। इस संसदात्मक लोकतन्त्र का उद्देश्य वास्तव में वर्तमान स्थिति को बनाये रखना है। इसका उद्देश्य यह नहीं है कि वर्तमान स्थिति में आधारभूत परितर्वन हो। हम विभिन्न संस्थाओं को बनाये रखना चाहते हैं। हम समाज के विभिन्न स्तरों को बनाये रखना चाहते हैं। इस कारण यदि यह संविधान अधिक दिन नहीं चला तो मुझे कुछ भी आश्चर्य नहीं होगा क्योंकि इसके द्वारा इस समय के जनसाधारण की आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं हो सकती। मेरे कई माननीय मित्रों ने समता, स्वतन्त्रता तथा बन्धुता के सिद्धान्तों की प्रशंसा की है। श्रीमान, मेरे विचार से, अब दो सौ वर्ष से अधिक समय के पश्चात् इन ऊंचे शब्दों का महत्व कुछ भी नहीं रह गया है। कई देश इन पदावलियों का सहारा लेकर ऊंचे स्तरों को बनाये रहे और नीचे स्तरों के लोगों का मनमाने ढंग से शोषण करते रहे। मेरे विचार से यदि इस संविधान को ठीक भावना से व्यवहार में लाया गया और वयस्क मताधिकार के कारण कुछ परिवर्तन हो गया और जन साधारण से हमें ठीक तरह के प्रतिनिधि प्राप्त हो गये तभी लोग अपने मनोवांछित फल को प्राप्त कर सकेंगे। अन्यथा जो बातें फ्रांस की क्रान्ति के पश्चात् अच्छी समझी गई थीं वे सन् 1949 ई. के लिये अच्छी नहीं कही जा सकतीं। शासन-व्यवस्था के वर्तमान ढांचे को बदलने के लिये किसी प्रकार के बलवे की अथवा क्रान्ति की आवश्यकता होगी जिससे जनसाधारण अपना अधिकार तथा अपनी शक्ति प्राप्त कर सकेंगे और देश का कल्याण स्वयं कर सकेंगे।

इस दृष्टि से श्रीमान, संसदात्मक लोकतंत्र से वर्तमान युग की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती। जब तक वयस्क मताधिकार के व्यवहार में आने से स्थिति में परिवर्तन नहीं होता, जब तक सम्पृक्त स्वार्थ वाले, जो वर्तमान स्थिति को बनाये रखने के लिये प्रयास करेंगे, भविष्य में स्थिति के बदलने के कारण अपने अधिकार को बनाये रखने की शक्ति खो नहीं बैठेंगे तब तक यह संविधान व्यवहार में आ नहीं सकेगा। अन्यथा वर्तमान युग को इससे बिल्कुल ही भिन्न संविधान की अपेक्षा है, कम से कम ऐसे संविधान की अपेक्षा तो है ही जैसाकि महात्माजी चाहते थे। आखिर पिछले तीन वर्षों में हम इसी संविधान को तो व्यवहार में लाये हैं। अपने अनुभव के आधार पर हम कह सकते हैं कि पिछले तीन वर्षों में हम जिस प्रकार प्रशासन कार्य चलाते रहे हैं उसमें तथा आगे जिस प्रकार चलायेंगे उसमें कोई विशेष अन्तर नहीं होगा। अगर हम उसका सिंहावलोकन करें तो हम इस परिणाम पर पहुंचेंगे कि हम लोगों की आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं कर सके हैं। यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि सरकार और लोगों की बीच कलह है, चाहे वह इस समय थोड़ा-सा ही क्यों न हो। हमें यह कहकर संतोष न करना चाहिये कि इस असंतोष ने अभी संगठित रूप धारण नहीं किया है और इसे व्यक्त करने के लिए लोगों ने अभी कोई ऐसा दल संगठित नहीं किया है जो वर्तमान प्रशासन को विनष्ट कर देगा। किन्तु इस प्रकार का दल आसानी से संगठित हो सकता

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

है क्योंकि असंतोष के बीज बो दिये गये हैं। लोगों को वर्तमान प्रशासन से बहुत सी शिकायतें हैं और वे उससे असंतुष्ट हैं और उसे अपना प्रशासन नहीं समझते हैं। इसलिये इस दृष्टि से मुझे सन्देह है कि वास्तव में यह संविधान भारतीयों के स्वभाव के अनुरूप है या नहीं और इससे वर्तमान युग की आवश्यकताओं की पूर्ति होगी या नहीं।

श्रीमान, इन बातों के होते हुए भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमने कई ऐसी बातें हासिल की हैं जिनके लिये हमें बधाई मिलनी चाहिये। सबसे अधिक बधाई के पात्र हैं दृढ़व्रती सरदार वल्लभभाई पटेल। सभी देशी राज्यों को समाप्त करके भारतभूमि में उन्हीं ने एकता स्थापित की है। बहुत कुछ उनकी बुद्धिमत्ता, विवेकशीलता तथा कार्यकुशलता के कारण ही वास्तविक लोकतन्त्र को व्यवहार में लाने के मार्ग में अल्पसंख्यकों आदि की जो रुकावटें थीं वह दूर हो सकीं। इसलिये यदि इस दृष्टि से देखा जाये तो हम ने बहुत कुछ हासिल किया है। वयस्क मताधिकार प्रदान करके, विशेष स्वार्थों तथा प्रतिनिधियों का उत्सादन करके तथा देशी राज्यों को समाप्त करके हमने बहुत उन्नति की है। किन्तु जहां हमने कुछ संपृक्त स्वार्थों को बढ़ने नहीं दिया है और उनकी निन्दा की है वहां दूसरी ओर इस प्रकार के अन्य स्वार्थों को मजबूत भी किया है। आगे चल कर हमें इन संपृक्त स्वार्थों को अनुदारता तथा जीर्ण दर्शनों के सुदृढ़ गढ़ न होने देना चाहिये और इसके लिये सचेष्ट रहना चाहिये। इस प्रसंग में मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि भारत के लोग इस संविधान का आदर करना सीखें। यदि वे इसमें कोई अभाव देखें तो वे यथोचित समय पर इसमें परिवर्तन कर सकते हैं। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि इस संविधान में हमने लोकतन्त्रात्मक शासन के तत्वों का समावेश करने के लिये यथाशक्ति प्रयास किया है।

कुछ लोगों को इस पर आपत्ति है कि राष्ट्रपति को अत्यधिक शक्ति प्रदान की गई है। मैं भी इससे सहमत हूं कि कुछ मामलों के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को अत्यधिक शक्तियां प्रदान की गई हैं किन्तु वास्तव में ये राष्ट्रपति की शक्तियां नहीं हैं। ये शक्तियां कार्यपालिका और प्रधान-मंत्री की हैं। मेरे विचार से राष्ट्रपति केवल संविधानिक सम्राट के रूप में ही कार्य कर सकेगा। वह कोई कदम नहीं उठा सकेगा और अपनी इच्छा से कोई कार्य नहीं कर सकेगा। यह अत्यधिक कार्यपालिका शक्ति केन्द्रीय सरकार को दी गई है। श्रीमान, मैंने यह प्रस्ताव उपस्थित किया था हमें एकात्मक शासन-प्रणाली स्वीकार करनी चाहिये। मुझे इसका संतोष है कि यद्यपि हमने पूर्ण रूप से एकात्मक शासन-प्रणाली स्वीकार नहीं की है किन्तु हमारे संविधान का स्वरूप संघीय से अधिक एकात्मक ही है। इस दृष्टि से मेरा यह विचार है कि आरम्भ में हमने जो व्यवस्था रखी थी उसमें बहुत सुधार कर दिया है।

मुझे एक दो शिकायतें करनी हैं किन्तु मेरे विचार से यह अवसर दोष निकालने का नहीं है। केवल इतना कहना पर्याप्त है कि भारत में जो समुदाय पिछड़े हुए समुदाय कहे जाते हैं उनके लिये वह सब नहीं किया गया है जो मैं चाहता था। इस सम्बन्ध में मैंने जो सुझाव रखा था उसे यदि स्वीकार का लिया गया होता तो कोई हानि नहीं होती। उसे संविधान में समाविष्ट करने योग्य नहीं समझा गया है किन्तु मुझे आशा है कि अनेक लोगों की उनके प्रति जो सहानुभूति है वह

भविष्य में विधि निर्माण करते समय अथवा नीतियों को निश्चित करते समय व्यक्त की जायेगी। आखिर अर्थ और शिक्षा की दृष्टि से सारा भारत पिछड़ा हुआ है। बहुत कम लोग ऐसे हैं जो सुसम्पन्न हैं, सुशिक्षित हैं और जीवन की सुन्दर वस्तुओं का उपभोग करते हैं। जनसाधारण अधिकतर निराश्रित हैं; उन्हें पेट भर भोजन नहीं मिलता है और उनके स्वास्थ्य की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता। इसलिये अनुसूचित जातियों अथवा आदिम जातियों की जो कठिनाइयां हैं वही कठिनाइयां हिन्दुओं के बड़े बड़े समुदायों की भी हैं। इस स्थिति में मेरा निवेदन है कि अनुसूचित जातियों तथा आदिम जातियों के प्रति जिस प्रकार हम सहानुभूति दिखाते हैं उसी प्रकार हम उन लोगों के प्रति भी सहानुभूति का परिचय दें जिन्हें अभी तक स्वतन्त्रता से कुछ भी लाभ नहीं हुआ है। जितनी अधिक सहानुभूति हम दिखायेंगे उतना ही अधिक सामंजस्य हम भारतीय समाज में ला सकेंगे।

श्रीमान, समय समय पर आपने हमें जिस स्वतन्त्रता से बोलने दिया तथा जिस निपुणता से इस सभा की कार्यवाही का संचालन किया उसके लिये मैं आपको फिर धन्यवाद देता हूं। उससे सभा के प्रत्येक सदस्य को बहुत हर्ष हुआ और हर प्रकार से संतोष हुआ। इस कारण मैं फिर आप की प्रशंसा करता हूं।

***श्री सीताराम एस. जाजू** (मध्य भारत): अध्यक्ष महोदय, मुझे इसका बहुत गर्व है कि मैं यहां माननीय डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव का समर्थन करने के लिये उपस्थित हुआ हूं। मैं संविधान सभा के इतिहास की चर्चा नहीं करना चाहता किन्तु मैं यह कहूंगा कि एक देशी राज्य के प्रतिनिधि होने के नाते मुझे इस संविधान सभा से देशी राज्यों के लोगों का उत्तरोत्तर घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित होने से बहुत संतोष हुआ है। हम देशी राज्यों के लोग भारत के वर्तमान प्रधान-मंत्री माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में और बाद को डॉ. पट्टाभी सीतारमय्या तथा शेख अब्दुल्ला की अध्यक्षता में देशी राज्यों के लोगों का भारतीय संघ से सम्बन्ध स्थापित करने के लिये प्रयास करते रहे तथा आन्दोलन करते रहे। हम यह चाहते थे कि देशी राज्यों के लोगों के प्रतिनिधियों में और ब्रिटिश भारत के लोगों के प्रतिनिधियों में कोई विभेद न किया जाये। हम यह समझते थे कि वंश, जाति, संस्कृति तथा अन्य सभी बातों की दृष्टि से हम सब एक ही लोग हैं, एक ही जाति के लोग हैं और देश के अवशिष्ट भाग के सम्बन्ध में हमारे हित एक समान हैं। हमारे सौभाग्य से राष्ट्रपिता महात्मा गांधी तथा राष्ट्र के अन्य नेताओं ने इसे समझा ओर उनके आशीर्वाद से हमें उत्तरोत्तर सफलता प्राप्त हुई और अन्ततोगत्वा हम आपके सुयोग्य नेतृत्व में इस सभा के कार्य में भाग ले रहे हैं। अध्यक्ष महोदय, आपने नरेशों से बातचीत आरम्भ की जिसका परिणाम यह हुआ कि अब केवल थोड़े से लोग उनके मनोनीत किये हुए हैं और अन्य सब भारतीयों के निर्वाचित सदस्य हैं। वास्तव में हमारी यह धारणा है कि एक वाक्य लिखकर ही हमने दो सौ वर्ष या इससे भी अधिक वर्षों का इतिहास मिटा दिया है। इस काल में विदेशी सरकार ने अपने साम्प्रदायिक स्वार्थों को तथा इस देश पर अपने आधिपत्य को बनाये रखने के लिये विभिन्न हितों को स्थापित किया था।

श्रीमान, इस संविधान के देशी राज्य विषयक अध्याय के सम्बन्ध में हमारी यह धारणा हुई कि देशी राज्यों पर केन्द्र के नियंत्रण की जो व्यवस्था की गई

[श्री सीताराम एस. जाजू]

है वह एक गलत व्यवस्था है। मेरी यह प्रबल धारणा है कि इस प्रकार के नियंत्रण को रखने का अर्थ देशी राज्यों का अपमान करना ही है। इस दृष्टि से मैंने तथा मेरे अन्य मित्रों ने विशेषत: श्री बलवंत सिंह मेहता ने इस विषय की ओर मसौदा समिति, उसके सभापति डॉ. अम्बेडकर तथा श्री टी.टी. कृष्णमाचारी और अन्य लोगों का ध्यान दिलाया। उन्होंने कृपा करके हमारी बात सुनी और हमसे कहा कि देशी राज्यों में स्थिति ही ऐसी है कि वे इससे भिन्न व्यवस्था नहीं कर सकते हैं। हम बहुत आगा पीछा करके उनसे सहमत तो हो गये किन्तु अब भी हमारा यह विश्वास है कि संविधान में इस प्रकार का विभेद करने की आवश्यकता नहीं थी। बाद को हमने सुना कि प्रान्तों के प्रति भी इसी प्रकार का व्यवहार किया गया है और अब हम देखते हैं कि संविधान में इस सम्बन्ध में उपबन्ध रखे गये हैं इससे हमें कुछ संतोष हुआ है क्योंकि कहावत है कि दूसरे को भी अपने ही दु:ख का भागी देखकर अपना दु:ख पीड़ा नहीं देता। किन्तु फिर भी हमारी यह धारणा है कि हमारे साथ इस प्रकार का व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए।

श्रीमान, देश-विभाजन के पश्चात् देश की राजनैतिक विचार-धारा में परिवर्तन हुआ है। पहले प्रान्तीय स्वायत्त-शासन पर ज़ोर दिया जाता था और अब केन्द्र को सुदृढ़ बनाने तथा उसे अधिक से अधिक शक्ति प्रदान करने पर जोर दिया जाने लगा है। विचार-धारा में जो परिवर्तन हुआ है उसकी मैं आलोचना नहीं करना चाहता क्योंकि सम्भवत: हमारे नेताओं का मत इसके पक्ष में है। वे देश को शक्तिशाली बनाना चाहते हैं। देश-विभाजन के पश्चात् अन्य घटनाएं भी घटित हुई हैं। उन घटनाओं के लिये हम उत्तरदाई नहीं हैं। किन्तु हमारी यह धारणा है कि देशी राज्यों में जो कुछ किया गया है वह एक महान कार्य है। साथ ही उप-प्रधान मंत्री महोदय ने जो राज्यमंत्री भी हैं हमें यह आश्वासन दिया है कि राज्यों के प्रशासन में कम से कम हस्तक्षेप किया जायेगा। मुझे आशा है कि हमें हरिजन समझ कर हमारे साथ व्यवहार नहीं किया जायेगा।

सबसे बड़ी बात जो हमने हासिल की है यह है कि राज्यों के लोगों को जिन्हें अभी तक मनुष्य तक नहीं समझा जाता था और जिन्हें कोई नागरिक अधिकार अथवा नागरिक स्वतंत्रतायें प्राप्त नहीं थीं; अब ये अधिकार प्रदान किये गये हैं और उन्हें उसी स्तर पर रखा गया है। जिस स्तर पर देश के अन्य नागरिक हैं। पुरानी प्रणाली मिटा दी गई है और बलात् श्रम लेने की तथा अन्य अमानुषिक प्रथाएं अब नहीं रहेंगी। किन्तु अभी हमें यह देखना है कि इस संविधान के उपबन्धों को व्यवहार में लाने में कितनी सफलता प्राप्त होती है। मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी संदेह नहीं है कि हमारे प्रधान मंत्री तथा उप-प्रधान मंत्री के सुयोग्य नेतृत्व में हमारी सभी आकांक्षाएं पूरी हो जायेंगी।

एक अन्य बात हमने अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में हासिल की है। पृथक् निर्वाचनों के कारण देश में असंतोष रहा है और उन्हीं के कारण देश का विभाजन भी हुआ है। हमने अब उन्हें मिटा दिया है। किन्तु मैं अपने सहधर्मियों को, जिनका इस सभा में बहुमत है, एक चेतावनी देता हूं। हमने स्थानों के रक्षण की प्रथा को तथा पृथक् निर्वाचक मंडलों को मिटा दिया है और हरिजनों के लिये ही केवल

दस वर्ष के लिये स्थानों के रक्षण की प्रथा को रहने दिया है। हमें ध्यान में रखना चाहिये कि आने वाले दस वर्षों में हम अल्पसंख्यकों के प्रति ऐसा व्यवहार करें और ऐसी सद्भावना दिखायें कि इस कालावधि की समाप्ति पर हम अनुसूचित जातियों के लिये स्थानों को रक्षित करने की व्यवस्था को भी समाप्त कर सकें। यदि हम इस परीक्षा में असफल रहे तो हमारी असफलता हमारे लिये हमेशा के लिये एक कलंक रूप हो जायेगी, हमें अपने कार्यों से यह प्रमाणित करना है कि उनके प्रति हमारे हृदय में सद्भाव है। यह समय कार्य करने का है। संविधान के किसी भी उपबन्ध का वह महत्व नहीं है जो कार्यों का है बातें बघारने से अधिक आवश्यकता है कार्य की। मुझे आशा है कि हम पीछे नहीं रहेंगे।

एक अन्य प्रश्न जिसे मैं उठाना चाहता हूं हमारे देश के आर्थिक एकीकरण के सम्बन्ध में है। मेरी यह धारणा है कि आर्थिक एकीकरण द्वारा हम केन्द्र को सशक्त कर रहे हैं। किन्तु हमें इसकी भी चिन्ता करनी चाहिये कि हम देशी राज्यों के प्रति, जो केन्द्र को इतना अधिक धन देते हैं, समुचित व्यवहार करें। आप उनसे रेल की आय और अन्य साधनों के समान कई चीज़ों को ले रहे हैं। आपको उनकी आर्थिक व्यवस्था को नष्ट नहीं करना चाहिये। मध्य भारत और अन्य राज्यों से, विशेषत: राजस्थान से, आपने बीकानेर जोधपुर और उदयपुर की रेलों को ले लिया है। यदि उन्हें केन्द्र से यथोचित आर्थिक सहायता नहीं मिली तो उनका दिवाला निकल जायेगा। आपको ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि वे अपना शासन प्रबन्ध अच्छी प्रकार करने में समर्थ हों।

प्रशासन के सम्बन्ध में हमने अपने प्रशासकों से सुना है कि देशी राज्यों के लोगों को अयोग्य ठहराया गया है। मैं यह कहूंगा कि देशी राज्यों के सम्बन्ध में इस प्रकार की जो बातें कही जाती हैं वे गलत हैं। सम्भवत: प्रान्तों में कुशासन के कुछ अधिक उदाहरण मिल जायेंगे। यह हम सभी को विदित है कि इस समय कुछ प्रान्तों में क्या हो रहा है। यदि सभी लोगों की यह राय है कि देशी राज्य इतने समुन्नत नहीं हैं कि उन्हें शक्ति सौंपी जा सके तो मैं पूछता हूं कि मद्रास प्रान्त में, पश्चिमी बंगाल में और पूर्वी पंजाब में क्या हो रहा है?

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रास: जनरल): आप मद्रास के बारे में क्या जानते हैं?

***श्री सीताराम एस. जाजू:** मैं मद्रास के बारे मैं कुछ नहीं जानता हूं किन्तु जो लोग प्रान्तों के हैं उनको चुनौती देकर मैं पूछता हूं कि वे आखिर देशी राज्यों के बारे में क्या जानते हैं। कोई कारण नहीं है कि आप देशी राज्यों के सैकड़ों लोगों को पिछड़े हुए लोग ठहरायें। हम पिछड़े हुए हो सकते हैं और हम यहां प्रतिनिधित्व भी कर सकते हैं। किन्तु आपको एक बात स्मरण रखनी चाहिये। हम मनुष्य हैं और हमारी वही आकांक्षायें हैं जो अन्य लोगों की हैं हम सब आप ही के समान दास थे और सौभाग्य से हम सभी दासत्व से मुक्त हुए हैं। इसके लिये हम बापू को धन्यवाद देते हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि आप हमसे किस प्रकार श्रेष्ठ हैं। मैं यह कभी नहीं मान सकता। जहां तक प्रशासन का सम्बन्ध है, चूंकि उसे उपप्रधान मंत्री का सुयोग्य प्रथप्रदर्शन प्राप्त है इसलिये सभी प्रशासन सेवाओं का एकीकरण किया गया है। हमारी यह धारणा है कि हमें प्रशासन सेवाओं

[श्री सीताराम एस. जाजू]

में यथेष्ट प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिये और उसके लिये हमें यथोचित अवसर मिलना चाहिये। इस सम्बन्ध में मेरी एक प्रार्थना है और वह यह है कि देशी राज्यों के लोगों की उपेक्षा न की जाये।

इसके अतिरिक्त एक बात और है वह यह है कि लोग यह कहते आये हैं कि "हम इस संविधान का समर्थन नहीं करेंगे। इसके लिये डॉ. अम्बेडकर और श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के समान अन्य सुयोग्य व्यक्ति हैं ही"। मैं इन लोगों से सहमत नहीं हूं। वे कहते हैं कि इस संविधान से अधिक परिवर्तन नहीं होता। मैं उनके इस विचार से भी सहमत नहीं हूं। मेरे विचार से यह संविधान इस देश के लिये सर्वथा उपयुक्त है। मेरे विचार से वर्तमान स्थिति में इससे अधिक उत्कृष्ट संविधान नहीं बनाया जा सकता है। हम सर्वत्र देखते हैं कि मनुष्य की बनाई हुई सभी चीज़ें दोषपूर्ण होती हैं और उनमें हमेशा सुधार किया जा सकता है। वर्तमान स्थिति में हम इससे अच्छा संविधान नहीं बना सकते थे। किन्तु मुझे विश्वास है कि यदि आज राष्ट्रपिता जीवित होते तो वे इसके सभी उपबन्धों से सहमत न होने पर भी इसका अनुमोदन करते। इस संविधान में ऐसे उपबन्ध हैं जो यह प्रमाणित करते हैं कि हमने गांधी के दर्शन का हृदय से समर्थन किया है। गांधी जी ने हमें जो भी सीख दी थी उसके तत्व संविधान में सन्निहित हैं और यदि संविधान को यथोचित रूप से व्यवहार में लाया गया तो इन तत्वों का विकास हो जायेगा।

जिस संविधान का हमने निर्माण किया है उसके द्वारा हम निर्वाचन के समय निर्वाचकों को दिये हुए सभी वचनों को पूरा कर सकते हैं किन्तु शर्त यह है कि हम उसे उसी भावना से व्यवहार में लायें जिस भावना से उसका निर्माण किया गया है। हमें अपने पथप्रदर्शन के लिये विधि अथवा अनुच्छेदों की शब्दावलि को ही नहीं देखना चाहिये। जिस भावना से हमने इस संविधान का निर्माण किया है उससे हमें प्रेरणा प्राप्त होनी चाहिये। श्रीमान, उदाहरणार्थ यद्यपि इस संविधान में इस प्रकार का कोई उपबन्ध नहीं है किन्तु हमारे प्रधान मंत्री ने हमें आश्वासन दिया है कि जब तक वे प्रधान मंत्री रहेंगे तब तक देशवासियों पर आय-कर फिर आरोपित नहीं किया जायेगा।

एक अन्य परिवर्तन भी किया गया है और वह यह है कि इस संविधान को वृहदाकार बनाया गया है। मैं आपका ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं कि कुछ बातें ऐसी हैं कि यदि उनके सम्बन्ध में आप संविधान में उपबन्ध नहीं रखेंगे तो वकीलों के वितंडावाद को प्रोत्साहन मिलेगा और न्यायपालिका कई उपबन्धों का ऐसा निर्वचन करेगी कि उनसे लोगों को हानि होगी।

श्रीमान, अब मैं सम्पत्ति के अधिकारों के प्रश्न को उठाऊंगा। श्रीमान् इस संविधान में यह उपबन्धित है कि केवल उन प्रान्तों में जमीदारी उत्सादित की जायेगी जहां 26 जनवरी 1950 के पूर्व इस उद्देश्य से विधेयक प्रस्तुत किये जायेंगे। इसे सारे भारत में समान रूप से उत्सादित करना चाहिये। 26 जनवरी तक सर्वत्र जमीदारी का उत्सादन हो जाना चाहिये। भारतीय गणराज्य में जमीदारी का, अथवा सामन्तशाही का, अथवा संपृक्त स्वार्थों का कोई अवशेष नहीं रहना चाहिये। इसके लिये हमें अवसर प्राप्त हुआ है और हमें पूर्ण विश्वास है कि पंडित नेहरू तथा

सरदार पटेल के नेतृत्व में हमें यह स्थिति प्राप्त होगी और देश उन्नति के पथ पर अग्रसर होगा। हमारी यह अकांक्षा थी कि हम अपना संविधान स्वयं बनायें और वह पूरी हो गई है। अपनी यात्रा में हम एक मंज़िल तय कर चुके हैं। अब हमें इस संविधान में सन्निहित आकांक्षाओं को पूरा करने का इससे कहीं बड़ा कार्य आरम्भ करना है। अब लोग यह देखेंगे कि निर्वाचकों को हमने जो वचन दिये हैं, उन्हें हम कैसे पूरा करते हैं। हमें, जो प्रत्येक अवसर पर महात्मा गांधी की शपथ लेते आये हैं, अब व्यवहार में यह दिखाना है कि हमारे कार्य गांधी जी के सिद्धान्तों से असंगत नहीं हैं। विशेषत: कांग्रेसजनों का यह कर्तव्य है कि वे सत्यनिष्ठा से महात्मा जी के आदर्शों का अनुसरण करें और साम्प्रदायिकता तथा संपृक्त स्वार्थों का पोषण करने वाले लोगों के शिकार न हों।

हमें सब बातों पर व्यवहारिक दृष्टि से विचार करना चाहिये और इस की चिंता करनी चाहिये कि संपृक्त स्वार्थों के पोषक लोगों का उत्पीड़न न करें। हम समझते हैं कि यह संविधान इस सभा द्वारा पारित लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव के अनुरूप ही है और हम इस का अनुमोदन करते हैं। इन शब्दों के साथ श्रीमान् माननीय डॉ. अम्बेडकर ने जो प्रस्ताव उपस्थित किया है उसका मैं समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** पंडित हृदय नाथ कुंजरू।

***श्री लोकनाथ मिश्र** (उड़ीसा: जनरल): मैं आशा करता हूं कि जिन लोगों ने पहले दिन अपने नाम दिये थे उन्हें अवसर दिया जायेगा।

***अध्यक्ष:** जिस क्रम से लोगों ने अपने नाम दिये थे उस क्रम से मैं उन्हें नहीं बुला रहा हूं।

***श्री लोकनाथ मिश्र:** फिर भी जिन लोगों ने अपने नाम दिये थे उन्हें अवसर मिलना चाहिये।

***अध्यक्ष:** उन्हें अवश्य अवसर मिलेगा।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस पूरे संविधान पर जो भी व्यक्ति अपने विचार व्यक्त करना चाहेगा वह बिना अपना उत्तरदायित्व समझे हुए ऐसा नहीं करेगा। हो सकता है कि यह संविधान प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा के अनुरूप न बना हो किन्तु कुछ सदस्यों ने इस पूरे संविधान की जो निन्दा की है उसका कोई अर्थ नहीं है। इस सम्बन्ध में श्रीमान उचित यही है कि मसौदा-समिति ने जिस योग्यता और निपुणता के साथ अपना कार्य सम्पन्न किया है उसके लिये हम सब उसकी प्रशंसा करें। उसके प्रत्येक सदस्य ने अकेले तथा अन्य सदस्यों के साथ बहुत परिश्रम किया है। यद्यपि कोई भी यह नहीं कह सकता कि उनकी सिफारिशें ऐसी हैं कि सभा के सभी वर्ग उसका अनुमोदन करेंगे, किन्तु इसे स्वीकार करना होगा कि जहां तक उन्हें अपनी इच्छा प्रकट करने की स्वतंत्रता प्राप्त थी वहां तक उन्होंने स्वतंत्रता को अधिक से अधिक

[पंडित हृदय नाथ कुंजरू]

विस्तृत करने के उद्देश्य से ही अपने कर्तव्यों का तत्परता से पालन किया। इस सम्बन्ध में श्रीमान, मैं संविधान-सभा के अधिकारियों तथा कर्मचारियों की प्रशंसा करता हूं जिनका कर्तव्य इस सभा के समक्ष अपनी सिफारिशें रखने में मसौदा-समिति की सहायता करना तथा इस संविधान में विभिन्न उपबन्धों को समझने तथा उनके सम्बन्ध में सूचना प्राप्त करने में सदस्यों की सहायता करना था। सम्भवत: इस सभा के किसी अन्य सदस्य की अपेक्षा मैंने उन्हें अधिक कष्ट दिया है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): कुछ अन्य लोगों ने भी कष्ट दिया है।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** इसलिये इस अवसर पर मैं केवल उनकी योग्यता की ही प्रशंसा नहीं करता बल्कि जिस उत्कृष्ट भावना से उन्होंने कार्य किया है उसकी भी प्रशंसा करता हूं। अपने कार्य को सम्पन्न करने में उन्होंने अनुनानीय उत्साह तथा कर्तव्य निष्ठा का परिचय दिया है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): वाह, वाह।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** मैं सच्चे हृदय से यह मत प्रकट करता हूं कि हमें उनके प्रति अपनी कृतज्ञता का उल्लेख कर देना चाहिये।

श्रीमान, हम संविधान पर कई दृष्टिकोणों से विचार कर सकते हैं किन्तु मेरे विचार से उसकी विशेषतायें यह हैं कि उसमें वैयक्तिक स्वतंत्रता के विषय में तथा केन्द्र और संघागों के भावी सम्बन्धों के विषय में उपबन्ध रखे गये हैं। अनुच्छेद 22 प्रथम विषय के सम्बन्ध में है। मैं इसे स्वीकार करता हूं कि उस अनुच्छेद में प्रान्तीय सरकारों की तथा केन्द्रीय सरकार की शक्ति पर ऐसे निर्बन्धन लगाये गये हैं जो पहले नहीं थे। उदाहरणार्थ सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियमों के अधीन कई प्रान्तीय सरकारों ने इस दायित्व को स्वीकार किया था कि वे उन बन्दियों को उन पर लगाये गये अभियोगों की सूचना देंगे, जो उसके लिये मांग करेंगे। कई मामलों में यह देखा गया कि सूचना बहुत देर करके दी गई थी। प्रान्तीय सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियमों का एक अन्य दोष यह था कि उनमें कोई उपबन्ध ऐसे नहीं थे जिनके आधार पर बन्दियों के मामले किसी मंत्रणा-मंडली के सामने रखे जा सकते थे। यदि यह व्यवस्था होती तो अभियोगों की न्यायिक परीक्षा न होने पर भी लोग यह समझते कि एक निरपेक्ष निकाय ने अभियोगों पर विचार किया है और इसकी परीक्षा की है कि बन्दीकरण न्याय्य था या नहीं था। अनुच्छेद 22 के अधीन प्रत्येक बन्दी का मामला एक मंत्रणा-मंडली के सामने जायेगा, जिसमें ऐसे लोग होंगे जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश रह चुके होंगे या न्यायाधीश नियुक्त होने की योग्यता रखते होंगे। इसके अतिरिक्त श्रीमान, सम्बन्धित सरकार पर यह आभार होगा कि वह बन्दियों को यथाशक्य शीघ्र सूचित करेगी कि उन्हें किन कारणों से बन्दी अथवा निरुद्ध किया गया है। यह भी उपबन्धित किया गया है कि कोई व्यक्ति, जब तक वह संसद निर्मित विधि के अनुसार निरुद्ध न किया

गया हो, संसद-निर्मित विधि द्वारा निर्धारित कालावधि से अधिक काल तक निरुद्ध नहीं रखा जायेगा। इस प्रकार पहले की विधियों में जो दोष थे उन्हें अनुच्छेद 22 द्वारा दूर कर दिया गया है। किन्तु निर्बन्धनकारी वर्तमान विधियों का हमारा अनुभव यह रहा है कि उनका प्रभाव क्षेत्र इतना संकीर्ण है कि विभिन्न प्रान्तों में जो कठिनाइयां उत्पन्न हो गई हैं उन्हें वे दूर नहीं कर सकतीं।

श्रीमान, यदि सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियमों के अधीन प्रान्तीय सरकारों को उन लोगों को निरुद्ध करने की पूर्ण शक्ति दी गई है जो उनके मतानुसार ऐसे कार्य करने जा रहे हैं, अथवा कर चुके हैं जिससे सार्वजनिक सुरक्षा की हानि होती है, किन्तु फिर भी कुछ मामलों में उच्च-न्यायालयों ने हस्तक्षेप किया है और उस आधार पर बन्दियों को मुक्त करने के लिये आदेश दिये हैं कि उन पर अस्पष्ट, अनिश्चित अथवा अपूर्ण अभियोग लगाये गये हैं और अधिनियमों के अधीन उन्हें जिन प्रार्थना-पत्रों को देने का अधिकार है उन्हें देने के लिये उन्हें पर्याप्त सूचना नहीं दी गई है। कुछ सरकारों ने मध्य प्रान्त की सरकार का नेतृत्व पाकर अपनी विधियों को संशोधित कर दिया है ताकि उच्च-न्यायालय इन कारणों से किसी व्यक्ति को मुक्त न कर सकें। मद्रास सरकार ने हाल ही में तत्विषयक विधि को संशोधित कर दिया और मद्रास की विधानसभा में वहां के विधि-मंत्री ने कहा कि यह परिवर्तन भारत सरकार के कहने पर किया जा रहा है। डॉ. अम्बेडकर ने हमारे सामने एक ऐसा अनुच्छेद रखा है जिससे प्रान्तीय सरकारों की शक्तियां निर्बन्धित हो जायेंगी किन्तु उनकी सरकार ने, सम्भवतः उन्हीं के मंत्रालय ने, प्रान्तीय सरकारों को यह मंत्रणा दी है कि वे उच्च न्यायालयों के अधिकार-क्षेत्र को समाप्त करने के लिये एक परोक्ष साधन को अपनायें।

यह दिखाने के लिये कि अनुच्छेद 22 का प्रभाव-क्षेत्र कितना संकीर्ण है मैं एक अन्य उदाहरण भी दूंगा। मध्य प्रान्त के उच्च-न्यायालय के समक्ष कुछ महीने पूर्व एक मामला आया था जिसमें उसे विदित हो गया कि जो अभियोग लगाये गये हैं वे निराधार हैं। सम्बन्धित बन्दी ने उसके समक्ष जो तथ्य तथा गवाही उपस्थित की उससे यह प्रमाणित हो गया कि प्रान्तीय सरकार का भय निराधार था और उसने जिन तथ्यों का उल्लेख किया था तथा बन्दी को गिरफ्तार करने के जो कारण बताये थे वे भी वास्तव में निराधार थे। मैं समझता हूं कि मध्य प्रान्त की सरकार ने बन्दी को निश्चित अभियोगों की सूचना दी होगी क्योंकि उसे यह भय था कि अन्यथा उच्च न्यायालय यह निर्णय करेगा कि उसका बन्दीकरण न्यायोचित नहीं है। किन्तु हमारे सामने इस सभा द्वारा पारित जिस अनुच्छेद 22 को रखा जा रहा है उससे ऐसे मामलों में कुछ भी सहायता नहीं मिलेगी। न तो केन्द्रीय सरकार पर और न प्रान्तीय सरकारों पर यह आभार होगा कि वे बन्दियों को निश्चित आरोपों की सूचना दें जिसका यह परिणाम होगा कि उच्च न्यायालय जो थोड़ा बहुत निरीक्षण करते रहे हैं वह भी नहीं कर सकेंगे।

श्रीमान, संविधान की एक विशेषता और है...

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं अपने माननीय मित्र को बता सकता हूं कि सम्भवतः अनुच्छेद 22 के खण्ड (1) के अधीन ऐसे मामले आ जायेंगे जैसे कि उनके ध्यान में हैं?

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** अनुच्छेद 22 का खण्ड (1) उन लोगों के मामलों के सम्बन्ध में नहीं है जो किसी निवारक विधि के अधीन बन्दी किये गये हों। मैं सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियमों के अधीन गिरफ्तार किये हुए लोगों की चर्चा नहीं कर रहा हूं किन्तु साधारण विधि के अधीन गिरफ्तार किये हुए लोगों की चर्चा कर रहा हूं। इसलिये मेरे विचार से अनुच्छेद 22 का खण्ड (1) उन लोगों के मामलों के सम्बन्ध में लागू नहीं होगा जिनकी मैं चर्चा कर रहा हूं।

श्रीमान, इस सम्बन्ध में मैं संविधान की एक और विशेषता की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं। विधि के प्रशासन का विधि के उपबन्धों से कम महत्व नहीं है। इसलिये यह आवश्यक है कि न्यायपालिका की स्थिति सुदृढ़ की जाये और ऐसी व्यवस्था स्थापित करने के लिये प्रत्येक कार्यवाही की जाये जिससे प्रत्येक व्यक्ति के प्रति, बिना किसी पक्षपात के न्याय हो सके। किन्तु मुझे भय है कि संविधान द्वारा वह व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकेगी, जो इसके लिये आवश्यक है, अर्थात् न्यायपालिका का कार्यपालिका से पृथक्करण नहीं हो सकेगा। इस विषय के सम्बन्ध में हमारे सामने जो सिफारिश की गई थी उसके अनुसार यह सुधार तीन वर्ष में हो जाना चाहिये था किन्तु जब इस सभा में इस पर विचार विमर्श हुआ तो उसमें यह उल्लेख नहीं रहने दिया गया। इस कारण यह सिफारिश अब तक सामान्य सिफारिश रह गई है। मुझे विदित है कि कम से कम मद्रास में न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करने की योजना एक दो जिलों में व्यवहार में लाई गई है और एक दो प्रान्तों में उसे व्यवहार में लाने की योजनाओं पर विचार किया जा रहा है। किन्तु संविधान के वर्तमान उपबन्धों के अधीन हम इस सुधार को यथाशक्य शीघ्र करने के लिये प्रान्तीय सरकारों पर जोर नहीं डाल सकते।

इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालयों की स्थिति को ही देखिये। भविष्य में यह और भी अधिक आवश्यक होगा कि उच्च न्यायालयों में विधि विषयक उच्चतम योग्यता रखने वाले लोग आयें और उन्हें ऊंची प्रतिष्ठा प्राप्त हो। श्रीमान, न्यायाधीशों के वेतनों तथा निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में जो उपबन्ध रखे गये है उन्हें देखते हुए तथा उन पदों को स्वीकार करने पर निजी विधि-व्यवसाय के प्रतिषेध को देखते हुए, मेरी यह धारणा होती है कि उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों के पदों के लिये विधि-विषयक उच्चतम योग्यता रखने वाले लोग नहीं आयेंगे। हम सब भी उच्चतम-न्यायालय के न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतन विषयक विधि को दुहरा सकते हैं जिसके कम से कम एक विधि तो ऐसी हो जाये जिससे आकर्षित होकर वास्तविक योग्यता रखने वाले लोग न्यायाधीश पदों को स्वीकार करें। मैं इस विषय का विस्तृत विवेचन नहीं करना चाहता किन्तु मेरे विचार से आवश्यकता इसकी है कि यदि कोई व्यक्ति वकीलों में से न्यायाधीश नियुक्त किया जाये तो उसका निवृत्ति वेतन उसकी सेवा की अवधि पर निर्भर न करे और उसे तथा अन्य न्यायाधीशों को जो निवृत्ति वेतन दिया जाये वह कम से कम इंग्लिस्तान के न्यायाधीशों के निवृत्ति-वेतन के बराबर तो हो ही। इस समय भारत में न्यायाधीश सेवा-निवृत्त होने पर अपने वेतन की तिहाई धन-राशि निवृत्ति-वेतन के रूप में पा सकते हैं। मेरे विचार से भविष्य में जो निवृत्ति-वेतन दिया जाय वह वेतन की धन-राशि की दो तिहाई राशि से कम न हो।

उच्च न्यायालयों की प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिये और न्याय प्रशासन की सुयोग्यता तथा पवित्रता के सम्बन्ध में लोगों में विश्वास उत्पन्न करने का एक अन्य उपाय यह है कि उच्च न्यायालयों को जिला न्यायाधीशों को नियुक्त करने तथा उनका स्थानान्तरण करने का अधिकार दिया जाये। आरम्भ में यह विचार किया गया था कि हम संविधान द्वारा उच्च न्यायालयों को यह प्राधिकार प्रदान करें। किन्तु दुर्भाग्य से सभा के समक्ष जो अनुच्छेद रखा गया था वह दुहराया गया और यह शक्ति उनसे ले ली गई। यह हमारे संविधान की एक कमजोरी है और मुझे बहुत खेद है कि यह रहने दी गई है। इन सभी विशेषताओं को देखने से हमें विदित होता है कि मसौदा-समिति ने और सम्भवत: केन्द्रीय सरकार ने उन उपबन्धों के महत्व को नहीं समझा है जो इस देश के भावी न्याय प्रशासन के सम्बन्ध में है।

श्रीमान, अपनी जगह पर बैठने के पूर्व मैं एक प्रश्न को और उठाना चाहता हूं। केन्द्र और प्रान्तों के बीच शक्ति के बंटवारे के सम्बन्ध में जो उपबन्ध हैं उनके गुणदोषों पर विचार करने में मैं किसी सिद्धान्त का सहारा नहीं लूंगा। संघ-शासन की एक परिभाषा नहीं है। विभिन्न प्रकार के संघीय संविधान हैं। हमें केवल यह देखना चाहिये कि क्या केन्द्र के और अंगभूत एककों के सम्बन्ध ऐसे हैं कि उनसे लोकतंत्र का विकास होगा और प्रान्तीय सरकारों में उत्तरदायित्व की भावना जाग्रत होगी। संसार के विभिन्न भागों में संघीय सरकारों का जो अनुभव रहा है उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि केन्द्रीय सरकार को कुछ ऐसे महत्वपूर्ण विषयों के सम्बन्ध में कार्यवाही करने का अधिकार होना चाहिये जिन्हें कुछ संविधानों में अंगभूत एककों के क्षेत्राधिकार में रखा गया है। इस समय जिस प्रकार की स्थिति है उसके अनुभव के आधार पर भी यह कहा जा सकता है कि आर्थिक क्षेत्र में भी केन्द्रीय सरकार को पर्याप्त शक्ति प्राप्त होनी चाहिये ताकि वह लोगों के जीवन-स्तर को ऊंचा उठा सके और देश को अधिक सुसम्पन्न बना सके। हम जानते हैं कि विभिन्न देशों में आर्थिक प्रश्न का क्या महत्व रहा है। इस लिये इस संविधान द्वारा संघीय सरकार को आर्थिक मामलों के सम्बन्ध में जो शक्ति दी गई है उसका अवश्य ही स्वागत किया जाना चाहिये।

इसके अतिरिक्त संविधान की इस विशेषता का भी स्वागत करना चाहिये कि केन्द्रीय सरकार को अपनी की हुई सन्धियों को तथा उन अभिसमयों को व्यवहार में लाने की शक्ति होगी जिनके लिये वह सहमत हुई हो। मेरे विचार से तथा साधारणतया सभी भारतीयों के विचार से 1935 के भारत-शासन अधिनियम का यह सबसे बड़ा दोष था कि केन्द्रीय सरकार को यह शक्ति प्राप्त नहीं थी। इसके अतिरिक्त श्रीमान, यह आवश्यक है कि केन्द्रीय सरकार को, जो देश की सुरक्षा के लिये उत्तरदाई है, बाहर के अथवा भीतर के कारणों से राष्ट्रीय सुरक्षा संकट में पड़ने पर प्रभावपूर्ण ढंग से हस्तक्षेप करने की शक्ति प्राप्त हो। किन्तु केन्द्रीय सरकार को कुछ ऐसी शक्तियां दी गई हैं जिनकी, मेरे विचार से, अन्य देशों के अनुभव को देखते हुए और पिछले युद्ध के पश्चात् संसार में जो घटनायें घटित हुई हैं उन्हें देखते हुए, आवश्यकता नहीं है।

श्रीमान मेरी दृष्टि में जो उपबन्ध हैं वे उस स्थिति के सम्बन्ध में हैं जब आपात के उपस्थित होने पर केन्द्र तथा अंगभूत एककों के आर्थिक सम्बन्ध टूट

[पंडित हृदय नाथ कुंजरू]

जायेंगे और जब राष्ट्रपति की यह धारणा होने पर कि किसी प्रान्त में आर्थिक आपात उपस्थित हो गया है केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय आयव्ययकों पर नियंत्रण रखेगी। मेरे विचार से इन उपबन्धों की आवश्यकता नहीं है। मुझे इन प्रश्नों का विस्तृत विवेचन करने का अवसर मिल चुका है इसलिये मैं इन पर इस समय अधिक नहीं बोलूंगा। मैं यह कहूंगा कि यह दो अनुच्छेद तथा अनुच्छेद 365 यह प्रदर्शित करता है कि हमारे संविधान में केन्द्र को अत्यधिक शक्ति प्रदान की गई है। भारत की वर्तमान स्थिति को देखते हुए भी इसकी आवश्यकता नहीं है कि केन्द्रीय सरकार अपने को हमेशा प्रान्तीय सरकारों की संरक्षक समझती रहे। मेरे विचार से 1935 के भारत शासन अधिनियम के अधीन राज्यपाल अन्य बातों के साथ अपने प्रान्त की साख तथा आर्थिक स्थिरता को बनाये रखने के लिय उतरदाई था। इस संविधान के अधीन राज्यपाल का स्थान केन्द्रीय सरकार ले लेगी। हमें अपने संविधान में धारा 93 को कुछ रूप भेद के साथ स्थान देने से संतोष नहीं हुआ। हमने लोकतंत्रात्मक प्रान्तीय सरकारों के वित्त पर भी नियंत्रण रखने के लिये उस अधिनियम से उपबन्ध लिये हैं। मेरे विचार से अनुच्छेद 365 से यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि संविधान में केन्द्र और राज्यों की सरकारों के बीच शक्ति के बटवारे के सम्बन्ध में जो उपबन्ध रखे गये हैं वे प्रान्तों का बिल्कुल अविश्वास करके रखे गये हैं। हम लोकतंत्रात्मक शासन के युग को आरम्भ करने जा रहे हैं किन्तु जिन राज्यों पर इस देश में लोकतंत्र का सफल होना या विफल होना निर्भर करता है उनका आरम्भ में ही हम अविश्वास कर रहे हैं। मेरे विचार से केन्द्रीय सरकार ने अपने ऊपर बहुत जिम्मेदारी ले ली है। इस संविधान द्वारा राज्यों की सरकारें अपनी जिम्मेदारी को नहीं समझेंगी और निरुत्साह होकर ही अपना कार्य करेंगी। इससे वे यह भी समझेंगी कि वे केवल केन्द्रीय सरकार की कार्यसाधिका हैं। इस प्रकार की धारणा से पूर्ण उत्तरदायित्व की भावना नहीं जाग्रत हो सकती और न इससे प्रान्तीय निर्वाचक-मंडलों और विधान-मंडलों को एक स्वशासित देश में जिस निरीक्षण की आवश्यकता होती है उस निरीक्षण को रखने के लिये प्रोत्साहन ही मिलेगा।

श्रीमान, मुझे आशा है कि राज्यों के भावी संविधान के सम्बन्ध में आप मुझे दो शब्द वयस्क मताधिकार के सम्बन्ध में कहने की भी आज्ञा देंगे क्योंकि वयस्क मताधिकार के आधार पर ही प्रान्तीय विधान-सभाओं के सदस्य चुने जायेंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मताधिकार के लिये सम्पत्ति का आधार कोई संतोषजनक आधार नहीं है। यदि कोई व्यक्ति किसी कर को नहीं देता है अथवा किसी विशेष किराये के मकान में नहीं रहता है तो इस कारण वह नागरिक होने के अधिकार से वंचित नहीं हो जाता। इसके विपरीत चूंकि पीड़ियों से उसकी श्रेणी के लोगों की उपेक्षा होती रही है इसलिये इस कारण भी उसे मताधिकार प्राप्त होना चाहिये जिससे वह उन लोगों पर दबाव डाल सके जिन पर उसकी स्थिति में सुधार करने का दायित्व है। किन्तु हमें इस पर विचार करना है कि वयस्क मताधिकार के कारण मताधिकार एकाएक विस्तृत हो जाने से क्या लोकतंत्र के विचारों का विकास होगा और क्या लोग विवेकशील और संयमशील होंगे क्योंकि उनके चरित्र पर ही लोकतंत्र की सफलता निर्भर है। मुझे विश्वास है कि प्रान्तों में इस समय 18 प्रतिशत से अधिक लोगों को वयस्क मताधिकार प्राप्त नहीं है। संविधान के भाग (ख) में उल्लिखित राज्यों में लोगों को शायद ही कोई मताधिकार प्राप्त है। उनमें से अधिकांश में शायद ही कोई स्थानीय निकाय होगा। इसलिये मुझे यह दिखाई देता है कि

जहां अभी तक बिल्कुल सीमित मताधिकार रहा है वहां लोगों को एकाएक सार्वभौम मताधिकार प्रदान करने में कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। यदि हम मताधिकार धीरे-धीरे प्रदान करते और एक निश्चित समय में, जैसे कि पन्द्रह वर्ष में वयस्क मताधिकार प्रदान करते और इस समय केवल 40 प्रतिशत से लेकर 50 प्रतिशत तक को मताधिकार प्रदान करके संतोष कर लेते तो हम लोगों को फुसलाने वालों को अधिक अवसर नहीं देते और राजनैतिक दलों के तथा उम्मीदवारों के निर्वाचकों के सम्पर्क में आने में तथा उन्हें शिक्षा देने में सुविधा प्रदान करते। किन्तु इस संविधान के व्यवहार में आने पर जो स्थिति उत्पन्न हो जायेगी उस स्थिति में निर्वाचकों को शिक्षा देना एक बहुत ही कठिन कार्य हो जायेगा। जिन लोगों को निर्वाचकों के अज्ञान का अनुभव है वे मताधिकार को एकाएक विस्तृत बनाने के सम्बन्ध में मैंने जो विचार व्यक्त किये हैं उनसे सहमत होंगे। चूंकि अब विचाराधीन संविधान में कुछ परिवर्तन नहीं किया जा सकता इसलिये मुझे आशा है कि देश के राजनैतिक दल तथा वे लोग हितैषी लोग, जिनकी यह प्रबल इच्छा रहती है कि प्रत्येक व्यक्ति एक उत्तरदाई नागरिक हो, निर्वाचकों को अपने कर्तव्यों से परिचित कराने के लिये तथा ऐसी स्थिति उत्पन्न करने के लिये यथासम्भव प्रयत्न करेंगे जिससे निर्वाचक आत्माभिमानी नागरिक हो सकें और कम से कम इतनी योग्यता तो प्राप्त कर सकें कि साधारण प्रश्नों पर विचार कर सकें।

श्रीमान, यदि हम संविधान पर उस दृष्टिकोण से विचार करें, जिसमें सभा के सामने रख चुका हूं, तो जहां हम उसके कुछ अंगों को अच्छा समझेंगे वहां दूसरे लोगों को बुरा भी समझेंगे। इममें कोई सन्देह नहीं है कि संविधान के कुछ अंग प्रशंसा के योग्य हैं। मूलाधिकार-विषयक अध्याय के कुछ उपबन्धों पर यद्यपि बहुत आपत्ति की जा सकती है किन्तु यह एक तथ्य है कि देशवासियों को और विशेषत: उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों को सारवान अधिकार प्राप्त हाते हैं। उस अध्याय में अल्पसंख्यकों को भी आश्वासन दिये गये हैं जिनका बहुत अधिक महत्व है। उन उपबन्धों को भी देखिये जो उस प्रणाली के सम्बन्ध में हैं जिसके अनुसार भविष्य में सरकारी सेवक नियुक्त किये जायेंगे। बहुत हद तक उनकी ईमानदारी तथा योग्यता पर ही देश का भविष्य निर्भर करेगा। मेरे विचार से हमें विश्वास होना चाहिये कि जहां तक किसी विधि के उपबन्धों द्वारा आश्वासन दिया जा सकता है वहां तक इस संविधान द्वारा भी आश्वासन दिया गया है कि सरकारी जगहों पर लोग केवल योग्यता के आधार पर ही नियुक्त किये जायेंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमने यह एक बहुत बड़ी बात हासिल की है। संविधान की इस विशेषता के लिये हम मसौदा-समिति तथा इस सभा के आभारी हैं। किन्तु उसके कई अंग ऐसे हैं जिनका हम हृदय से समर्थन नहीं कर सकते। चाहे जो भी उपबन्ध हों इस अवसर पर हमें संविधान का समर्थन करना ही चाहिये। मेरे विचार से कोई भी व्यक्ति उसके विरोध में मत नहीं दे सकता है। साथ ही मैं यह कहूंगा कि हममें से कुछ लोग इस संविधान के कुछ महत्वपूर्ण उपबन्धों से असंतुष्ट हैं और हमारी यह इच्छा है, जैसा कि प्रधान-मंत्री महोदय ने कुछ मास पूर्व कहा था कि क्या ही इच्छा होता यदि यह सम्भव हो कि संविधान को कुछ वर्ष तक हम उसी प्रकार संशोधित कर सकते जैसे कि हम किसी साधारण विधि को संशोधित कर सकते हैं। *(हर्षध्वनि)*

***श्री श्यामानन्दन सहाय** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आज हमें जो अवसर प्राप्त हुआ है वह कई कारण से एक अद्वितीय अवसर कहा जा सकता है। इस अवसर पर सब से पहले हमें करबद्ध होकर धन्यवाद देना चाहिये कि उसने हमारे उन नेताओं की अभिलाषायें तथा आकांक्षायें पूर्ण की हैं जिन्होंने अर्धशताब्दी तक संघर्ष किया और उस लक्ष्य तक पहुंचने के लिये किसी त्याग को भी बड़ा नहीं समझा जिसे प्राप्त करने पर हमें आज यह सुदिन देखने को मिला है। आज हमें आशीर्वाद देने के लिये तथा उन्नति के मार्ग में हमारा पथप्रदर्शन करने के लिये यदि उनमें से कुछ नेता हमारे बीच में होते तो हम अपना अहोभाग्य समझते। साथ ही, मेरे विचार से, कितना अच्छा होता यदि इस संविधान में अध्यात्मिकता का भी समावेश होता तथा उसे एक महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता। इससे यह संविधान अन्य संविधानों से भिन्न नहीं हो जाता क्योंकि हम देखते हैं कि अन्य संविधानों में भी इस प्रकार का उल्लेख है। हमारे लिये इस विषय का और भी अधिक महत्व है क्योंकि इतिहास में पहली बार हमारे यहां महात्मा ने धर्म और राजनीति का सम्बन्ध स्थापित किया है। उन्होंने केवल यही नहीं बताया कि राजनीति में धर्म का क्या स्थान है बल्कि पहली बार यह सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया कि केवल लक्ष्य ही सच्चा तथा उत्कृष्ट न होना चाहिये बल्कि उसे प्राप्त करने के साधन भी सच्चे तथा उत्कृष्ट होने चाहिये क्योंकि तभी उससे वास्तव में लोगों का हितसाधन हो सकेगा। श्रीमान, हममें से कुछ लोगों की यह धारणा है कि राजनीति का अध्यात्म से नाता जोड़ना ठीक नहीं है। मेरे विचार से वर्तमान समय में इस प्रकार के विचार की आवश्यकता नहीं है। इस देश में अथवा विदेशों में बोलते हुए क्या हमारे नेता इस देश के आध्यात्मिक इतिहास के महत्व को नहीं बताते? अपने राष्ट्र के सर्वप्रथम कार्य में यदि हम इस अध्यात्म को अभिव्यक्त नहीं करते तो क्या इससे हमारी प्रशंसा होगी? किन्तु चाहे इसका इस देश के लिखित संविधान में समावेश हो या न हो किन्तु मुझे विश्वास है कि इस संविधान के उद्देश्य को पूरा करने में हमारे देशवासी तथा हमारे नेता कभी ईश्वर का विस्मरण नहीं होने देंगे। तभी हमारा संविधान वास्तव में सफलता के साथ प्रवर्तन में आयेगा।

श्रीमान, आज इस अवसर पर हमें प्राचीन ऋषियों के प्रति भी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करनी चाहिये क्योंकि उन्हीं ने इस देश की आध्यात्मिक, आर्थिक, सामाजिक तथा धार्मिक व्यवस्था की सुदृढ़ भूमि में नींव डाली। वयोवृद्ध सुप्रतिष्ठित डॉ. सच्चिदानन्द सिन्हा अब आरम्भ में इस सभा के अध्यक्ष थे तो अपने अन्तिम भाषण में उन्होंने भारत के महान कवि इकबाल की कविता से यह उद्धरण दिया था–

यूनान ओ मिस्र रोमन सब मिट गये जहां से,
बाक़ी अभी तलक है हिन्दोस्तां हमारा।
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन दौरे ज़मां हमारा।

कवि कहता है कि हम में अवश्य ही कोई बात ऐसी है कि अभी तक हमारा अस्तित्व है। अन्य देशों की तुलना में इस देश की वह विशेषता कौन सी है? श्रीमान, मेरा निवेदन है कि वह इस देश का अध्यात्म है।

जैसा कि मैं पहले निवेदन कर चुका हूं, आज हमें एक अद्वितीय अवसर प्राप्त हुआ है और वह कई कारणों से एक अद्वितीय अवसर है। इतिहास में वह एक अद्वितीय अवसर है। यदि हम अपने इतिहास का अवलोकन करें तो हमें यह स्वीकार करना होगा। एक समय सुयोग्य शासकों के राज में इस देश में दूध की नदियां बहती थीं और इस समय हम जिस रामराज्य की स्थापना के लिये सचेष्ट हैं वह एक समय यहां अस्तित्व में था। किन्तु था वह लोकहितैषी शासकों का शासन ही और लोकप्रतिनिधियों का स्वयं अपनाया हुआ विधि शासन नहीं था। इसलिये श्रीमान, मेरा निवेदन है कि यदि आप वर्तमान काल की तुलना प्राचीन काल से भी करें तो आपको प्रत्यक्ष हो जायेगा कि आज का अवसर एक अद्वितीय अवसर है। मेरा निवेदन है कि भविष्य के लिये भी यह अवसर अद्वितीय ही रहेगा। हम भविष्य में संविधान में सुधार कर सकते हैं और अधिक उत्कृष्ट बातों को अपना सकते हैं किन्तु यह फिर भी स्वीकार करना ही होगा कि आरम्भ में यही संविधान बना था, और कोई संविधान नहीं बना था।

श्रीमान, यह संविधान इस दृष्टि से भी एक अनूठा संविधान है कि इसमें न केवल तथाकथित ब्रिटिश भारत को स्थान दिया गया है बल्कि देशी राज्यों को भी स्थान दिया गया है जहां अभी तक परम्परागत नरेश शासन करते थे। अब भारत में हिमाचल से लेकर कन्याकुमारी तक एक ही प्रकार का शासन होगा।

जब हम यह सब विचार करते हैं तो हमें इस पर खेद होता है कि इस देश के दो भागों को पृथक कर दिया गया है। किन्तु हम आशा करते हैं कि हमारे देशवासी, चाहे वे कहीं भी क्यों न हों, सद्बुद्धि को ग्रहण करेंगे और हम फिर भारत को उसी रूप में देख सकेंगे जिस रूप में हम उसे अतीत काल से देखते आये हैं।

श्रीमान, हमारे देश में जो एकता स्थापित हुई है उसका पूर्ण श्रेय भारत के वयोवृद्ध तथ दृढ़व्रती सरदार वल्लभभाई पटेल को है। लैटिन में हमने एक कहावत पढ़ी थी जिसका अर्थ है, "गये, देखा और विजित किया।" यही कहावत कार्यरूप में परिणत हुई क्योंकि देशी राज्यों को समाविष्ट करने के सम्बन्ध में हमने सरदार पटेल को इसी को चरितार्थ करते देखा है। वे गये उन्होंने देखा और विजित किया। उनके देश के सभी लोग ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वे दीर्घ काल तक जीवित रहें और इस देश की सेवा करते रहें।

श्रीमान, एक अन्य दृष्टि से भी आज का अवसर एक अद्वितीय अवसर है। आज से इस देश में स्वतंत्र्य-युग आरम्भ होने जा रहा है। यह स्वतंत्र्य, अहिंसात्मक असहयोग अथवा सत्याग्रह के उपाय से प्राप्त हुआ है, जो उपाय पहले कभी विदित नहीं था। अपने विरोधी के प्रति बिना किसी प्रकार का द्वेषभाव रखे हुए अहिंसा के उपाय से उसका सामना करने से आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त हुई है। इस पर अब सारे संसार का अटल विश्वास हो गया है। यह कितने दु:ख का विषय है और विधि का कैसा कठोर विधान है कि जिस व्यक्ति की तपस्या से यह सब कुछ प्राप्त हुआ है वह अब हमारे बीच में नहीं है। भारत को उनकी आज और भी अधिक आवश्यकता थी। इतने अल्प काल में हमें जो फल प्राप्त हुआ है उससे उस तपस्या का प्रभाव प्रत्यक्ष हो जाता है। साथ ही यह देखकर हर्ष

[श्री श्यामानन्दन सहाय]

भी होता है और आश्चर्य भी कि यद्यपि हम में से कुछ लोग अभी तक परित्राणों तथा स्थानों के रक्षण की चर्चा करते आये हैं किन्तु उन बातों को संविधान में बहुत कम स्थान दिया गया है। यह एक हर्ष की बात है कि जो लोक परित्राणों के समर्थक थे उन्होंने राष्ट्र के हितों को दृष्टि में रखकर उनकी मांग का स्वेच्छा से परित्याग कर दिया है। इसके लिये वे बहुत बधाई के पात्र हैं।

इस सम्बन्ध में अन्त में मैं यह निवेदन करता हूं कि यह संविधान एक अन्य दृष्टि से भी एक अनूठा संविधान है। महात्माजी के उपायों ने यह प्रमाणित किया है कि विरोधियों के प्रति सद्भाव रखने में बड़े से बड़े आलोचक को भी पराजित किया जा सकता है तथा उसका भी सद्भाव प्राप्त किया जा सकता है। इस आदर्श को हम अब व्यवहार में देख सकते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्वतंत्रता प्राप्ति का श्रेय महात्माजी को है किन्तु साथ ही उसे एक संहिता का रूप देने का श्रेय महात्माजी के सबसे कड़े आलोचक, अर्थात हमारे महान संविधान के महान निर्माता डॉ. अम्बेडकर को है। श्रीमान, यह सभा ही नहीं बल्कि सारा राष्ट्र डॉ. अम्बेडकर का आभारी है। उन्होंने तथा उनके सहकारियों ने संसार की सर्वोत्तम बातों को ढूंढ निकालने तथा उन्हें इस देश की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के लिये अथक परिश्रम किया। उन्होंने जिस कुशलता से संविधान का मसौदा तैयार कराया, तथा जिस कुशलता से सत्ता द्वारा पारित कराया, उसे हम ही नहीं बल्कि आने वाली पीड़ियां भी कृतज्ञता के साथ स्मरण करेंगी। इस संविधान के कई दोषों की ओर ध्यान दिलाया गया है। मेरे विचार से इस संविधान के निर्माता यह नहीं कहते कि यह दोषमुक्त है। किन्तु यह स्वीकार करना होगा कि वर्तमान स्थिति में इसे जितना अधिक दोषमुक्त बनाया जा सकता था उतना अधिक दोषमुक्त बनाने के लिये सच्चाई और ईमानदारी के साथ प्रयत्न किया गया है। कुछ मित्रों ने और आलोचकों ने इसकी उस संविधान से तुलना की है फ्रांस में टेनिस के एक मैदान में बनाया गया था, अथवा उस संविधान से तुलना की है जो अमरीका के बहुत कुछ स्वनिर्वाचित एकतीस सदस्यों ने बनाया था। 1787 में जो प्रशासन-सम्बन्धी प्रश्न अथवा सिद्धान्त थे उनकी अपेक्षा अब बिल्कुल भिन्न प्रश्न और सिद्धान्त हैं। किसी देश के लिये अथवा किन्हीं लोगों के लिये जो संविधान के निर्माण का बीड़ा उठाना चाहते हैं यह उचित नहीं है कि पिछले पौने दो वर्षों में संसार में जो उन्नति हुई है उसकी उपेक्षा करें।

श्रीमान, इस संविधान में एक प्रकार की संघीय एकात्मक शासन प्रणाली को स्वीकार किया गया है जो बहुत कुछ एकात्मक शासन प्रणाली ही है। विधि निर्माण तथा कर लगाने के सम्बन्ध में समवर्ती तथा केन्द्रीय विषयों की लम्बी सूची, कुछ दिशाओं में राज्यों के प्रशासन को अपने हाथ में ले लेने की केन्द्र की शक्तियां, कार्यपालिका के मामलों के सम्बन्ध में भी राज्यों को निदेश देने की शक्तियां आदि अवश्य ही यह प्रमाणित करती हैं कि यह संविधान उतना संघीय संविधान नहीं है जितना कि एकात्मक संविधान है। मैं यह नहीं कहता कि यह अकारण ही किया गया है किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि मेरी यह धारणा है कि इस संविधान में राज्य और प्रान्तों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखते हुए हमने उन पर जिस प्रकार विश्वास प्रकट किया है उससे कहीं अच्छा यह होता कि हम उन पर तथा वहां के लोगों पर अधिक विश्वास करते।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, मूलाधिकारों के सम्बन्ध में मेरी यह धारणा है कि बहुत शर्तों को रख कर उनका परिसीमन किया गया है। यद्यपि संविधान में हमने सभी स्वातंत्र्यों के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं किन्तु जहां हमने उनका उल्लेख किया है वहां आगे चल कर तुरंत ही उन शर्तों को भी निर्धारित कर दिया है जिससे उन स्वातंत्र्यों का परिसीमन हो जाता है। वास्तव में हमने ऐसी विधियों की कोई कालावधि भी निश्चित नहीं की है जिनसे नागरिकों की स्वतंत्रता का परिसीमन होता है। श्रीमान आपको विदित ही होगा कि पहले इस प्रकार की विधियों की कालावधि निश्चित की जाती थी किन्तु वर्तमान संविधान में हमने निर्धारित किया है कि नागरिकों की स्वतंत्रता को परिसीमित करने वाली विधियों की कालावधि रखे बिना ही उन्हें प्रस्तुत किया जा सकता है और पारित किया जा सकता है। सम्भवत: वर्तमान स्थिति में इस प्रकार के उपबन्ध से सुव्यवस्था बनी रहे किन्तु फिर भी मैं यह कहूंगा कि अच्छा यह होता कि हम अपने देशवासियों का कुछ अधिक विश्वास करते और उन लोगों को दंडित करने का काम न्यायपालिका पर छोड़ देते जो अपनी स्वतंत्रता को स्वच्छंदता में परिणत करना चाहते हैं। आखिर जनसाधारण स्वतंत्रता चाहते किस लिये हैं? वे चाहते हैं कि अभी हाल में उन्होंने जो स्वतंत्रता प्राप्त की है उससे उन्हें नवीन जीवन प्राप्त हो तथा नवीन प्रतिष्ठा प्राप्त हो और वह बिना स्वातंत्र्य अपहरण के भय के सर ऊंचा किये हुए इधर उधर जा सकें। मैं निवेदन करता हूं कि जन साधारण में इस भावना का अभाव है। यदि हम भाग 3 के अनुच्छेद 19 के खण्ड (2) से लेकर (6) तक को ऊपरी तौर से भी देखें तो हमें यह स्पष्ट हो जायेगा कि हमने जनसाधारण के मार्ग में बहुत निर्बन्धन रखने तथा प्राधिकारियों को बहुत शक्तियां प्रदान करने का प्रयास किया है। किन्तु इस संविधान को हम जिस प्रकार प्रयोग में लायेंगे उस पर बहुत बातें निर्भर करेंगी। चूंकि हम अपने नेताओं को जानते हैं इसलिये हम समझते हैं कि ऐसे बहुत अवसर नहीं आयेंगे जब सरकार को दी हुई इन शक्तियों का प्रयोग किया जायेगा।

मेरे विचार से प्रान्तों और केन्द्र के बीच आर्थिक समायोजन करने में प्रान्तों के साथ यथोचित व्यवहार नहीं किया गया है। वास्तव में मेरी यह धारणा है कि 1935 के अधिनियम के अधीन इस सम्बन्ध में प्रान्तों की जो स्थिति थी उसकी अपेक्षा अब वह गिर गई है। केन्द्र की अपेक्षा प्रान्तों के दायित्व अधिक हैं और लोगों के हितसाधन के लिये उन्होंने अधिक वचन दिये हैं। इस लिये उन्हें कर लगाने के लिये पर्याप्त अधिकार दिया जाना चाहिये था। श्रीमान आपको विदित ही है कि बिहार में यद्यपि इस्पात का एक कारखाना है, जो इस देश का ही नहीं बल्कि एक समय सारे साम्राज्य के सबसे बड़े कारखानों में दूसरा गिना जाता था, यद्यपि वहां से सारे देश को कोयला भेजा जाता है और यद्यपि जो पदार्थ निर्यात किये जाते हैं उन में वहां का अभ्रक सबसे अच्छा समझा जाता है किन्तु चूंकि इन सब कारखानों के मुख्य कार्यालय बम्बई अथवा कलकत्ता में हैं, इस लिये उस प्रान्त को उनसे बहुत कम आय होती है और आयकर तक का अधिक अंश नहीं मिलता। हाल में आसाम के प्रतिनिधि भी यही शिकायत कर रहे थे। इसे ध्यान में रखते हुए कि आर्थिक साधनों के सम्बन्ध में हम किन बातों पर आघात कर रहे हैं। इसकी आवश्यकता है कि इस विषय पर केन्द्र के प्रतिनिधि तथा प्रान्तों और राज्यों के प्रतिनिधि गम्भीरता से विचार करें।

[श्री श्यामानन्दन सहाय]

मेरी यह धारणा है कि हमने एक ऐसे संविधान का निर्माण किया है कि हम एक उच्च स्तर से उसे लोगों पर आरोपित कर सकेंगे और उसके लिये प्रयास नहीं किया है कि उसका आधार ग्रामीण जीवन हो। आपको स्मरण होगा कि इस विषय पर इस सभा में महत्वपूर्ण वाद-विवाद हुआ था और मैं यह कहूंगा कि पहली बार मेरे मन में यह विचार उठा कि डॉ. अम्बेडकर गलती कर रहे हैं और बहुत बड़ी गलती कर रहे हैं। इस देश के ग्रामीण जीवन के सम्बन्ध में उनकी जो धारणा है वह एक गलत धारणा है। वास्तव में गांव ही शहरों की आवश्यकतायें पूरी करते हैं। चाहे आप सैनिक प्रशासन को देखें अथवा असैनिक प्रशासन को और चाहे आप खाद्य के उत्पादन को ही देखें; आपको स्पष्ट हो जायेगा कि ग्रामीण ही हमारी सब आवश्यकतायें पूरी करते हैं। यह न कहना चाहिये कि उनका सुधार हो ही नहीं सकता। आखिर हमारे देशवासी अधिकतर ग्रामीण ही हैं। यदि वे अभी उस स्तर पर नहीं पहुंचे हैं जिस स्तर पर हममें से कुछ लोग उन्हें देखना चाहते हैं, तो इसके लिये कौन दोषी है? केन्द्र ने कभी उनकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। क्या अब भी हम यही करना चाहते हैं? मेरा निवेदन है कि यदि हम ऐसा करेंगे तो हमारी ही हानि होगी। दुर्भाग्य से हमने अधिकतर 1935 के अधिनियम का ही अनुसरण किया है और इस लिये हम इस देश के उत्थान के लिये जो अन्य कार्य आवश्यक थे उनपर न विचार ही कर सके हैं और न उनकी ओर यथेष्ट ध्यान ही दे सके हैं।

इसके अतिरिक्त हमने एक लिखित संविधान तैयार किया, किन्तु हमें विदित है कि ऐसे देश भी हैं जिनके लिखित संविधान नहीं हैं और यदि उनका कार्य लिखित संविधान वाले देशों से श्रेष्ठ ढंग से नहीं चल रहा है तो कम से कम उतनी ही अच्छी तरह तो चल ही रहा है। इसलिये बहुत कुछ इस पर निर्भर करता है कि संविधान को किस प्रकार व्यवहार में लाया जाता है। हमारे देश में सुयोग्य व्यक्तियों का अभाव नहीं है। इसलिये यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया कि वे किस दल विशेष के हैं और उनकी सेवाओं से लाभ उठाने का सच्चा प्रयास किया गया, तो मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि हम शीघ्र ही प्रमाणित कर सकेंगे कि वास्तव में हमारे देशवासी कैसे हैं और यह संविधान कैसा है।

श्रीमान, समाप्त करने के पूर्व मुझे यह प्रकट करना चाहिये कि आपने इस सभा के कार्य का संचालन जिस सुयोग्य ढंग से किया है उसके सम्बन्ध में मेरी तथा अन्य सदस्यों की क्या भावना है। जहां तक मुझे विदित है आप पहले किसी विधान-मंडल के सदस्य नहीं रहे हैं किन्तु आपने जिस ढंग से सभा के कार्य का संचालन किया तथा जिस ढंग से विधान-मंडल की परम्परा का पोषण किया उस पर संसार के अच्छे से अच्छे संसद-प्रक्रिया-वेत्ता गर्व कर सकते हैं। यह हम सभी के लिये गर्व की बात है।

मेरे विचार से बिना इस सभा के विरोधी दल के नेताओं के सम्बन्ध में दो शब्द कहे हुए मुझे अपना भाषण समाप्त नहीं करना चाहिये। विरोधी दल के नेता रहे हैं सर्वश्री कामत, सिधवा, नज़ीरुद्दीन अहमद और बिहार के संविधान-वेत्ता श्री ब्रजेश्वर प्रसाद। अन्ततोगत्वा मसौदा-समिति को इस सभा में बहुत से संशोधन उपस्थित करने पड़े जिससे यह प्रमाणित होता है कि इन साहसी सदस्यों ने समय समय पर जो सुझाव रखे थे उनमें बहुत सार था। प्रोफेसर शाह जैसे साहसी प्रतिवादी

भी अन्त में ब्रजेश्वर प्रसाद के आगे बढ़ने पर पीछे हट गये। एक नवीन धर्म अंगीकार करने वाले के समान वे अपनी पूरी योग्यता के साथ संघर्ष करते रहे। वास्तव में यदि यह लोग न होते तो हम पर संविधान को जल्दी में पारित करने का आरोप लगाया जाता। जिस प्रकार ये लोग तीन वर्ष तक वाद-विवाद चलाते रहे उसके लिये हममें से प्रत्येक व्यक्ति को इन्हें धन्यवाद देना चाहिये।

हमारे नेताओं ने देश को स्वतंत्र किया है और हम अपने लिये एक संविधान भी बना चुके हैं किन्तु इससे यह न समझना चाहिये कि हमारी कठिनाइयों का अन्त हो गया है मैं यह कहूंगा कि हमारी कठिनाइयां अब आरम्भ होने जा रही हैं। इसलिये हम इस बुद्धिमत्तापूर्ण कहावत को सदा स्मरण रखें कि "सतत सचेत रहना ही स्वतंत्रता का मूल्य है"। हम इस प्रकार व्यवहार करें कि हमारे सम्बन्ध में यह कभी न कहा जा सके कि:

"खोला कफस तो ताकते परवाज़ ही नहीं,
बुलबुल तेरे नसीब को सय्याद क्या करे।"

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष, मुझे इसका आश्चर्य है कि मेरे कुछ माननीय मित्र सभा की कार्यवाही को इस मंजिल तक पहुंचाने पर भी सचेत और गम्भीर भाषण ही देना चाहते हैं। मेरे लिये तो यह सप्ताह हर्ष और उत्सव का सप्ताह है। इस सप्ताह के समाप्त होने के पूर्व हम एक ऐसे संविधान को पारित कर चुकेंगे जिस पर मैं नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूं, भारत वर्ष तो गर्व करेगा किन्तु संसार भी इसे एक आश्चर्य समझेगा। श्रीमान आप जैसे सुयोग्य तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति के पथप्रदर्शन से हम सारे स्वतंत्र भारत के लिये एक ऐसे संविधान को पारित करने जा रहे हैं जिसमें, जहां तक हो सका है, संसार के वर्तमान संविधानों के दोषों को नहीं आने दिया गया है और उनके उत्कृष्ट सिद्धान्तों को चुन चुन कर समाविष्ट किया है। इससे स्वतंत्रता प्रेमी युवकों तथा युवतियों की आकांक्षायें ही नहीं पूरी हुई हैं किन्तु भारत की प्राचीन प्रतिष्ठा भी ऊंची हुई है। जब हमें यह ध्यान होता है कि यह प्राचीन देश, जो अभी तक इंडिया कहा जाता था, अब फिर भारत कहा जायेगा तो हमें हर्ष होता है। जब हमें इसका स्मरण होता है कि हाल ही में स्वतंत्रता प्राप्त किये हुए इस देश की राजकीय भाषा हिन्दी होने जा रही है तो हमें बहुत गर्व होता है। जब हम देखते हैं कि देवनागरी को सारे देश की लिपि के रूप में स्वीकार किया गया है तो हमें बहुत गर्व होता है। श्रीमान, मैं इस सभा के अपने मुसलमान भाइयों का आभारी हूं जिन्होंने बिना किसी संकोच के तथा एक मत से भारत की इस इच्छा की पूर्ति में हमारा समर्थन किया है।

इस संविधान के निर्माण के लिये हमें इस सभा के कई सदस्यों को धन्यवाद देना है। मैं उनके नाम नहीं दुहराना चाहता किन्तु श्रीमान, मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि इस सभा का कार्य-संचालन करते हुए आपने हम पर जो कृपा की उसके लिये हम आपके बहुत आभारी हैं। मुझ जैसे लोगों के प्रति तथा अन्य लोगों के प्रति आपने जिस धैर्य का परिचय दिया उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि वास्तव में आप धैर्य की मूर्ति ही हैं। मैं इस अवसर पर आप

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

को मि. नज़ीरुद्दीन अहमद, श्री सिधवा, श्री कामत तथा अपनी ओर से धन्यवाद देता हूं। मैं इस सूची में प्रोफेसर के.टी. शाह का नाम भी जोड़ देता किन्तु मैंने उसे जानबूझ कर नहीं रखा है। वे पिछले दो सत्रों में मौन रहे हैं—बिल्कुल मौन रहे हैं। दिखाई यह देता है कि मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधनों की प्रतिलिपियों को ही चोर उठा ले गये किन्तु वे प्रोफेसर शाह की तो पाण्डुलिपि को ही चुरा ले गये। इसलिये पिछले सत्र में थोड़े से संशोधनों के अतिरिक्त उन्होंने न तो अधिक संशोधन उपस्थित किये और न भाषण ही दिये।

श्रीमान इस सभा की कार्यवाही को आरम्भ करते हुए महामना डॉ. सच्चिदानन्द सिन्हा ने जो कुछ कहा था उसका एक एक शब्द मुझे स्मरण है। उन्होंने आपके निर्वाचित होने पर आप को बधाई दी थी और कहा था कि अपने जीवन में आप कभी भी द्वितीय श्रेणी में नहीं निकले। आप कलकत्ता विश्वविद्यालय में, जिसका शिक्षा क्षेत्र पंजाब से लेकर सुदूर आसाम तक है, पहली श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। उन्होंने यह भी कहा था कि जब आपने उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने से इनकार कर दिया था तो वे बहुत हताश हुए थे। श्रीमान, आज मैं कह कहूंगा, और मेरे विचार से यह सभा मेरे इस कथन से सहमत होगी कि इस संविधान को देश में व्यवहार में लाने में भी आप सबसे आगे हैं। आपके नेतृत्व में एक पराधीन राष्ट्र, क्योंकि इस संविधान के निर्माण का कार्य आरम्भ करते समय हमारा राष्ट्र एक पराधीन राष्ट्र ही था, इस सभा के कार्य-काल में ही स्वाधीन हो गया। यद्यपि एक बार आप बिहार को हताश कर चुके हैं किन्तु मुझे आशा है कि संविधान के अधीन जिस प्रतिष्ठित तथा सम्मानित पद को प्राप्त करने के आप अधिकारी हैं उसे स्वीकार करने से इनकार कर के आप भारत के अन्य भागों के लोगों को हताश नहीं करेंगे।

मैंने अपने कुछ माननीय मित्रों के संयत तथा गम्भीर भाषणों की ओर ध्यान आकृष्ट किया था। किन्तु कैसी बात है कि फिर भी उन्होंने दो महत्वपूर्ण विषयों की ओर ध्यान नहीं दिया है? मेरे विचार से इनमें से पहला विषय गायों से रक्षा के सम्बन्ध में है। इस संविधान में कुछ हद तक हमने गो-रक्षा के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं, किन्तु गायों की रक्षा के सम्बन्ध में कोई उपबन्ध नहीं है। इस संविधान में स्त्रियों से रक्षा के सम्बन्ध में भी कोई उपबन्ध नहीं है। मेरा निवेदन है कि स्त्रियों से रक्षा के सम्बन्ध में उपबन्ध रखना बहुत आवश्यक है। आपने निदेशक तत्वों के अध्याय में स्त्रियों और बच्चों की रक्षा के सम्बन्ध में कुछ उपबन्ध रखे हैं किन्तु आपने एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय पर विचार नहीं किया है। वह विषय है स्त्रियों से रक्षा का विषय। मुझे आशा है कि यह सभा मेरे सुझाव को एकमत से स्वीकार करती है और मेरे समान उसे भी खेद है कि स्त्रियों से रक्षा के सम्बन्ध में संविधान में कोई उपबन्ध नहीं है। यदि कोई व्यक्ति इस सुझाव के प्रति अपना विरोध प्रकट करना चाहता है, अथवा वह कर्णमधुर वाणी में विरोध प्रकट करना चाहती हो तो वे आगे बढ़ें और मेरे इस मत का विरोध करें।

***एक माननीय सदस्यः** क्या आप पर स्त्रियों ने अत्याचार किया है कि आप उनसे रक्षा की मांग करते हैं?

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** मैं इस की व्याख्या करूंगा। यह मेरा कोई नवीन विचार नहीं है। जिन माननीय मित्रों ने शिष्टता के नाते आसाम के मेरे माननीय मित्र—मि. निकोल्स राय का भाषण सुना उन्होंने आसाम की गायों के बारे में मेरे मित्र ने जो कुछ कहा था उसे सुना होगा। उन्होंने कहा था कि जब तक उन गायों को मारने की आज्ञा नहीं दी जाती जिन पर बेकार में खर्च होता है तब तक उनसे बहुत खतरा बना रहेगा। मैं उनके कथन की व्याख्या करते हुए निवेदन करता हूं कि आसाम में वास्तव में इस प्रकार का खतरा है क्योंकि उस प्रान्त में गो पालन प्रचलित नहीं है। जब गायें ब्याती हैं तभी उन्हें घर लाया जाता है। वे कभी बाज़ारों में और कभी खेतों में ब्या जाती है किन्तु किसी मनुष्य के घर में कभी नहीं ब्याती। ये गायें, जो साल में नौ-दस महीने स्वच्छंदता से घूमती रहती हैं और इसी दशा में ब्याती भी हैं, बहुत खतरनाक हो जाती हैं। वे बहुत कुछ जंगली हालत में होती हैं और जो व्यक्ति उनके निकट जाता है उसे सींग मारने के लिये दौड़ती हैं। आसाम के प्रान्त में कई बुरी नस्ल के सांड भी हैं जिनके कारण गायों की नस्ल भी खराब हो जाती है। यदि आप इन मवेशियों को बिना मनुष्यों की देख रेख के स्वच्छंदता से रहने देंगे तो वास्तव में इन गायों से खतरा रहेगा और इसकी आवश्यकता पड़ेगी कि हम इनसे अपनी रक्षा करें।

स्त्रियों से रक्षा-विषयक विचार भी मेरा अपना विचार नहीं है। मेरे माननीय मित्र डॉ. देशमुख ने कुत्सित वेश्यावृत्ति को समाप्त करने के सम्बन्ध में एक संशोधन उपस्थित किया था किन्तु उन्होंने उसे उपस्थित नहीं किया। मेरे विचार से स्त्रियों की उपस्थिति में उस संशोधन को उपस्थित करने में डॉ. देशमुख ने लज्जा का अनुभव किया किन्तु मेरे विचार से उन्होंने गलती की। हमें वास्तव में स्त्रियों से रक्षा की आवश्यकता है क्योंकि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से वे हमें ढकेल कर निकालने के लिये उद्यत हैं। दफ्तरों से, विधान-मंडलों से, दूतावासों से तथा सब जगहों से वे हमें ढकेल कर बाहर निकालने का प्रयास कर रही हैं। उन्हें सफलता प्राप्त होती है और वह दो कारणों से। एक कारण यह है कि हमें शिष्टता का बहुत ध्यान रहता है और दूसरा कारण यह है कि वे अधिकार-सम्पन्न लोगों के कान में जो कुछ कह देती हैं उसका उन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इस संविधान में एक अच्छी बात है और उसके लिये मैं डॉ. अम्बेडकर को बधाई देता हूं। उन्होंने स्त्रियों के लिये विशेष स्थान रखने पर कभी जोर नहीं दिया और संविधान में ऐसी व्यवस्था नहीं है। इससे कुछ रक्षा हुई है और हमने कुछ हासिल किया है। यदि स्त्रियों के लिये स्थान न रखने के पश्चात् भी पुरुषों की यह धारणा है कि वे उन्हें आगे बढ़ायें तो मुझे खेद होगा। इन सब बातों के लिये डॉ. अम्बेडकर उत्तरदाई नहीं हैं। मूर्ख लोग ही उन्हें मत देकर विधान-मंडलों में भेजते हैं और फिर हिन्दू कोड के सम्बन्ध में जैसी कठिनाइयां उत्पन्न हुई हैं वैसी कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं।

अब श्रीमान, मैं अपने मित्र श्री लक्ष्मी नारायण साहू के भाषण के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। उनका भाषण सुनने के पश्चात् यह धारणा बन सकती है कि इस संविधान में कोई भी ऐसी बात नहीं है जो देखने के योग्य हो। भारत-शासन-अधिनियम के सम्बन्ध में कुछ लोग कहते थे, और ठीक ही कहते थे कि वह छूने के योग्य भी नहीं है। श्री साहू ने भी उन्हीं की भाषा दुहराई है और इस संविधान के विषय में उनका भी वही विचार है। किन्तु क्या

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

मैं उनसे निवेदन कर सकता हूं कि वे 1946 के दिसम्बर के प्रथम सप्ताह का स्मरण करें? उस समय हमारी स्थिति कैसी थी? मुस्लिम लीग ने निर्वाचनों का बायकाट किया था और इस संविधान सभा का भी बायकाट करने का प्रयास कर रही थी। कहा यह जाता था कि जब तक दलबन्दी की प्रणाली को स्वीकार नहीं किया जायेगा तब तक संविधान सभा समवेत नहीं होगी। जब मुस्लिम लीग ने संविधान-सभा का बायकाट करने का निश्चय प्रकट कर दिया तो यह दिखाई दिया कि इस सभा का कार्य आगे बढ़ाने से कोई लाभ नहीं होगा। संविधान-सभा में भी कुछ ऐसे सदस्य, जो मुस्लिम लीग के सदस्य नहीं थे, यह कहते थे कि अच्छा यह होगा कि इस समय हम लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव को स्थगित कर दें और मुस्लिम लीग के सदस्यों को सभा में आने दें और फिर अपना कार्य आरम्भ करें और तब तक संविधान-सभा की बैठकों को स्थगित रखें। वह एक बहुत संकटपूर्ण समय था। यदि उस समय हमारे नेता हिचकते और विचलित होते, यदि पंडित नेहरू और सरदार पटेल विचलित होते तो निकट भविष्य में स्वातन्त्र्य प्राप्ति की आशा बिल्कुल मिट जाती। किन्तु इसके विपरीत स्थिति यह थी कि यदि हम संविधान सभा के सदस्यों के रूप में समवेत हो जाते और यदि एक बार सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न संविधान सभा सत्रस्थ हो जाती तो संसार की कोई भी शक्ति स्वातन्त्र्य-प्राप्ति में बाधा नहीं डाल सकती थी। वास्तव में हुआ यही है। पंडित नेहरू ने दृढ़ निश्चय से कहा "चाहे कुछ भी हो जाये। चाहे दलबन्दी हो या न हो, संविधान-सभा समवेत होगी और समस्या को हल करेगी।" जब एक बार वह समवेत हुई तो स्वातन्त्र्य-प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त हो गया, क्योंकि स्थिति यह थी कि संविधान सभा जो भी संविधान बनाती वह व्यवहार में लाया जाता। इसलिये श्रीमान, स्वतंत्रता का संग्राम उसी समय सफल हो गया जिस समय संविधान-सभा समवेत हो गई। आज हमें उन राजनीतिज्ञों की प्रशंसा करनी चाहिये जिन्होंने किसी प्रकार संविधान-सभा की पहली बैठक करा दी। श्रीमान, जब उन दिनों का स्मरण किया जाता है तो महात्मा गांधी का भी स्मरण हो आता है, जिन्होंने दलबन्दी की प्रणाली को नष्ट किया था। दुर्भाग्य से इस सम्बन्ध में कांग्रेस कार्यकारिणी समिति के भी स्पष्ट विचार नहीं थे। यदि महात्मा गांधी तथा हमारे आसाम के प्रधान मंत्री सचेष्ट न रहते तो बंगाल और पंजाब जैसे बड़े प्रान्त और आसाम का एक बहुत बड़ा क्षेत्र पाकिस्तान के भाग हो जाते। इसलिये क्या मैं अपने माननीय मित्र श्री साहू से अनुरोध कर सकता हूं कि वे इस पर विचार करें और यह समझें कि संविधान-सभा तथा संविधान की योजना को कार्यान्वित करने से हमें क्या लाभ हुआ है? आज संविधान के अधीन कैसी स्थिति है और 1946 के दिसम्बर में कैसी स्थिति थी?

श्रीमान, मुझे अपने माननीय मित्र श्री कामत के पूरे भाषण को सुनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है। मेरे विचार से उन्होंने पूरे संविधान का हृदय से समर्थन नहीं किया है। अपने मित्र श्री कामत के हाल के कृत्यों का मुझ पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। संविधान-निर्माण से सम्बन्धित कार्य की समाप्ति के पश्चात् मैंने उनके कुछ दायित्वों को स्वीकार किया था। मैं अपने निजी सम्बन्धों तथा उनके निजी जीवन की चर्चा कर रहा हूं। मैं उनसे असंतुष्ट हो गया हूं और मैं कह नहीं सकता कि मैं उस कार्य को करूंगा या नहीं जिसे सम्पन्न करने का मैंने उन्हें आश्वासन दिया था। वे कुछ दिनों से जोगिये रंग के कपड़े पहनने लगे हैं। आपने देखा है कि वे जोगिये रंग के कपड़े पहने हुए कैसे घूमते रहते हैं। वे हर समय

ईश्वर की चर्चा करते रहते हैं। वे चाहते हैं कि सभा ईश्वर से प्रार्थना करने के पश्चात् कार्य आरम्भ करे। उनके इन सब विचारों ने मुझे चकित कर दिया है। मैं समझता हूं कि एक समय वह भी आयेगा जब उनकी वह भावना प्रबल हो उठेगी जिसे उन्होंने देश की सेवा के लिये आई.सी.एस. को छोड़कर प्रदर्शित किया था। मुझे यह दिखाई देता है कि वे अपने विचारों को कार्यान्वित करने के हेतु अपने सांसारिक जीवन का परित्याग कर देंगे।

***श्री ए.वी. ठक्कर** (सौराष्ट्र): क्या मैं पूछ सकता हूं कि इसका संविधान से क्या सम्बन्ध है?

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** श्रीमान, इसका सम्बन्ध इस प्रकार है। हमने अपने लिये एक संविधान बनाया है और अब इस कार्य के समाप्त होने पर हमें खुशी मनानी चाहिये। हमने गम्भीरता से बहुत कार्य किया है। इस संविधान के फलस्वरूप हमें खुशी होनी चाहिये। यदि हमें खुशी ही है तो हम मुंह लटकाये हुए क्यों रहें। बायरन ने एक बार कहा था "जो कुछ लिख गया है वह लिख गया है, अब अच्छा यह होगा कि हम कुछ अधिक समझदारी से काम लें।" बहुत से गम्भीर भाषण देकर आप जो कुछ कर चुके हैं उसे मिटा नहीं सकते। यदि मेरे माननीय मित्र ठक्कर बापा ने मुझे परामर्श नहीं दिये होते तो मैं इस समय गम्भीर-मत्ता लोगों की बातों से भी अधिक गम्भीर बात कहता होता। आखिर सदा गम्भीर-मत्ता तथा रूढ़िवादी होने से क्या लाभ? एक कहावत है, "क्या मनुष्य गम्भीर-मत्ता उल्लू को घृणा की दृष्टि से देख सकता है" इसलिये मैं कहता हूं कि जो कुछ लिख गया है वह लिख गया है। बहुत चिंता मोल लेकर तथा बहुत कष्ट उठाकर हमने इस संविधान का मसौदा तैयार किया है और वह अब हमारे सामने है। मैं इसे स्वीकार करता हूं कि अन्य संविधानों की अपेक्षा इस संविधान में अधिक विवरण है। इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है। सम्भव है वह इस कारण रखा गया कि हम भारतीय कई शताब्दियों तक गुलाम रहे हैं और अब हम केवल लिखित बातों में विश्वास करते हैं, कथित बातों में नहीं। हमारा संविधान इंग्लिस्तान के अलिखित संविधान से भिन्न है, जिसमें वे जब चाहते हैं तब परिवर्तन कर लेते हैं। अपने संविधान में हमने बहुत सावधानी का परिचय दिया है और बहुत विवरण रखा है, यद्यपि हम उसे छोड़ सकते थे क्योंकि देशवासी उसे अपने सामूहिक अनुभव के आधार पर रख सकते थे। किन्तु हमने अपने ही सामूहिक अनुभव के आधार पर व्यवस्था की है और भविष्य के लिये कुछ न छोड़कर संविधान में बहुत अधिक विवरण रखा है।

किन्तु इससे यह न समझा जाये कि इस संविधान के विरूद्ध मुझे कोई आपत्ति नहीं करनी है। मुझे इस पर बहुत आपत्ति है कि संविधान मृत्यु-दंड के सम्बन्ध में मौन है। अब संसार सभ्य हो गया है और अब मृत्यु-दंड को जारी रखना बर्बरता समझा जाता है। सभ्य संसार मृत्यु-दंड नहीं चाहता है। मृत्यु-दंड से लोग अपराध करने से नहीं डरते। मैं यह चाहता था कि संविधान में हम इस आशय का एक उपबंध रख देते कि मृत्यु-दंड नहीं दिया जायेगा। जहां तक मुझे ज्ञात है स्कैंडेनेविया के देशों में अर्थात् नार्वे और स्वीडन में और अमरीका के कुछ राज्यों में मृत्यु-दंड की व्यवस्था नहीं है। इटली में मृत्यु-दंड समाप्त कर दिया गया था किन्तु फासिस्ट नेता सेनोर मुसोलिनी ने उसे फिर रख दिया। हममें जो

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

फासिस्टों की सी प्रवृत्ति है उस कारण हम इस देश में मृत्यु-दंड की व्यवस्था को अब भी बनाये रखना चाहते हैं। चाहे जो भी किया गया हो, संविधान में एक समुचित उपबन्ध है जिसके फलस्वरूप हम जब भी चाहेंगे संविधान को संशोधित कर सकेंगे।

***अध्यक्षः** श्री चौधरी, आप गम्भीर बातें करने लगे हैं।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरीः** श्रीमान, मैं हमेशा गम्भीर बातें करता हूं, किन्तु अन्य लोग उन्हें गम्भीर नहीं समझते। अपनी ओर से मैं हमेशा गम्भीरता को अपनाये रहता हूं किन्तु लोगों को मेरे सम्बन्ध में भ्रम हो जाता है। जिन लोगों ने कारावास का दंड भुगता है वे मेरे इस कथन का समर्थन करेंगे कि कालेपानी का दंड और आजन्म कारावास का दंड मृत्यु-दंड से कहीं कठोर दंड है। मृत्यु-दंड दे देने के पश्चात् उस दंड के पाने वाले को प्रतिष्ठा प्राप्त हो जाती है। किसी अपराधी को यह प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं होनी चाहिये। मृत्यु-दंड चाहे राजनैतिक मामले में दिया जाये या अन्य मामलों में और चाहे पाने वाला साधारण अपराधी क्यों न हो, और चाहे अन्यथा उस अपराध के कारण उसका विस्मरण हो जाता और उसके परिवार वाले उससे घृणा करने लगते किन्तु उस दंड के कारण उनका उस अपराधी के प्रति प्रेम उमड़ आता है। यदि अन्य प्रकार का दंड दिया जाता तो उस आदमी के सम्बन्धी यह समझ सकते थे कि उसे ठीक ही दंड दिया गया है। किन्तु मृत्यु-दंड के दे दिये जाने पर उस अपराधी के मित्र तथा परिवार के लोग उससे सहानुभूति करने लगते हैं। क्या आप यह समझते हैं कि इस प्रकार के दंड से डर कर लोग अपराध नहीं करेंगे? इस प्रकार के दंड से जिस व्यक्ति को फांसी लगती है उसके परिवार वाले उससे सहानुभूति रखने लगते हैं और उसकी प्रशंसा करते हैं। आखिर हम महात्मा गांधी के अनुयायी हैं जिन्होंने कुछ हद तक ईसा मसीह के सिद्धान्तों को स्वीकार किया था। आपको आंख फोड़ने के अपराध के लिये किसी की आंख न फोड़नी चाहिये और दांत तोड़ने के अपराध के लिये दांत न तोड़ना चाहिये। आपको जान लेने के अपराध के लिये किसी की जान न ले लेनी चाहिये। आधुनिक भारत को, गांधी के भारत को, इस प्रकार के विचार ही अपनाने चाहिये। अपने संविधान द्वारा मृत्यु-दंड को समाप्त न करके, मेरे विचार से हमने गलती की है। हम इस गलती को बाद में ठीक भी कर सकते हैं।

मैं एक अन्य विषय की भी चर्चा करना चाहता हूं जिसके सम्बन्ध में मेरा दृढ़ मत है। यह आयुध-अधिनियम का विषय है। अंग्रेजों के राजकाल में हमने आयुध-अधिनियम के विरूद्ध कई वर्षों तक संघर्ष किया किन्तु वह अब भी कानून के रूप में ज्यों का त्यों बना हुआ है। यह क्यों? चूंकि विभिन्न प्रकार के अपराध किये जाने लगे हैं इस कारण ही क्या आप आयुध-अधिनियम को समाप्त नहीं करना चाहते। यह विचार कदापि न कीजिये कि जो लोग हिंसा और अपराध करना चाहेंगे वे एक क्षण के लिये भी आपके आयुध-अधिनियम से डरेंगे। उससे केवल वही लोग डरेंगे जो डाकुओं और अपराधियों से अपनी रक्षा करना चाहते हैं। ये ईमानदार लोग ही आपके आयुध-अधिनियम के कारण आयुध नहीं रख सकते। अपराधियों और खूनियों को आपके इस अधिनियम का कभी भी डर नहीं रहेगा।

इसलिये श्रीमान, मेरी यह धारणा है कि अच्छा यह होता कि इस संविधान द्वारा हम आयुध-अधिनियम को समाप्त कर देते।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, एक विषय और है जिसकी अब मैं चर्चा करना चाहता हूं और जिसकी चर्चा करने के लिये मैं बंबई के मेरे माननीय मित्र श्री खेर के भाषण को सुनकर विवश हुआ हूं। वह विषय कार्यपालिका और न्यायपालिका के पृथक्करण का विषय है। हम न्यायपालिका और कार्यपालिका के पृथक्करण के लिये बहुत दिनों से चीख पुकार कर रहे हैं। किन्तु उसके सम्बन्ध में हमने संविधान में कोई उपबन्ध नहीं रखा है। इस पर मुझे अधिक आपत्ति नहीं है, क्योंकि संविधान में कोई उपबंध ऐसा नहीं है जिससे हमें न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करने में रूकावट होती हो। परन्तु मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ है कि एक प्रतिष्ठित नेता, जिन पर बंबई जैसे बड़े प्रान्त के प्रशासन का भार है, यह कहने लगे कि न्यायपालिका के सभी लोग दूध के धोये नहीं हैं और कार्यपालिका के सभी लोग मूर्ख अथवा अपराधी नहीं हैं। हो सकता है कि आज कल की कार्यपालिका में बहुत ऊंचे लोग हों, जो न्यायपालिका के कार्य में हस्तक्षेप न करते हों, किन्तु आप भविष्य के लिये कैसे प्रत्याभूति दे सकते हैं। वास्तव में श्रीमान, मेरे विचार से, जब वयस्क मताधिकार प्रदान किया जा रहा है, तो हमें किसी प्रकार का संरक्षण प्राप्त होना चाहिये। यह संरक्षण एक स्वाधीन न्यायपालिका ही प्रदान कर सकती है। इसलिये न्यायपालिका को यथाशक्य शीघ्र स्वाधीन बना देना चाहिये।

इस सम्बन्ध में श्रीमान, मुझे खेद है कि संविधान में उच्च-न्यायालयों के न्यायाधीशों को एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानान्तरित करने के बारे में उपबन्ध रखे गये हैं। कुछ मामलों में दंड देने के उद्देश्य से स्थानान्तरण होगा। उदाहरणार्थ यदि बंबई के उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश आसाम को स्थानान्तरित किया गया तो उससे अच्छा वह यह समझेगा कि उसे पोर्ट ब्लेयर भेज दिया जाता। कोई न्यायाधीश बंबई से आसाम को अथवा संयुक्त प्रान्त से भी आसाम को स्थानान्तरित होना पसन्द नहीं करेगा। वह समझेगा कि उसे अनिश्चित काल के लिये कालेपानी की सजा दे दी गई है। वह यह करेगा कि राज्यपाल अथवा राष्ट्रपति को प्रसन्न करने का प्रयास करेगा ताकि वह आसाम अथवा उड़ीसा जैसे दंडभोगियों के प्रान्त को स्थानान्तरित न किया जाये। आसाम अथवा उड़ीसा में भी कुछ न्यायाधीश ऐसे पाये जायेंगे जो संयुक्त प्रान्त अथवा बंबई को अपने को स्थानान्तरित कराने के लिये कुछ भी दे देने को तैयार होंगे। इस संविधान द्वारा यह संरक्षकता का अधिकार राष्ट्रपति और राज्यपाल को दिया गया है। यह एक नवीन प्रकार की संरक्षकता है। यह संरक्षकता का एक नवीन मार्ग है और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों तक को खरीद कर स्थानान्तरित करने की एक नवीन प्रणाली है। पुराने संविधान के अधीन इस प्रकार स्थानान्तरण नहीं हो सकता था। नये संविधान द्वारा इस प्रकार स्थानान्तरण किया जा सकता है। यह मेरे विचार से एक बहुत बड़ी गलती है और यह हमारा कर्तव्य है कि हम यथाशीघ्र इस गलती को ठीक कर दें।

(इस अवसर पर अध्यक्ष महोदय ने घंटी बजाई)

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

श्रीमान, जिन लोगों ने इस सभा में पर्चियां दी थीं उनमें मैं तीसरा था। इस लिये मुझ पर पुराने नियम लागू होते हैं, नये नियम लागू नहीं होते। पुराना नियम बीस मिनट तक बोलने का है और नया नियम पन्द्रह मिनट तक बोलने का। मुझ पर पुराने नियम लागू होते हैं।

***अध्यक्ष:** दोनों एक साथ लागू होते हैं।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** श्रीमान, हमारे प्रान्त की आर्थिक स्थिति की ओर इस सभा का ध्यान आकृष्ट करने के लिये मेरे माननीय मित्र श्री सआदुल्ला ने जो कुछ कहा है उसमें मैं भी योग देना चाहता हूं। यदि स्थिति वैसी ही रही जैसी कि इस समय है और उसमें तुरन्त ही कोई परिवर्तन नहीं हुआ तो प्रान्त का प्रशासन चलाना असम्भव हो जायेगा। मैंने सुना है कि तुरन्त ही सब कुछ गिरने वाल है। आप सुनेंगे कि केवल धन के अभाव के कारण आसाम अपना शासन-कार्य नहीं चला पा रहा है।

श्रीमान, एक अन्य बात जिसकी ओर मैं सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं, अपवर्जित क्षेत्रों का न्याय-प्रशासन है। असैनिक प्रक्रिया संहिता, अपराध प्रक्रिया संहिता तथा अन्य सब विधियां जो भारत के अन्य प्रान्तों में प्रयुक्त हैं, अपवर्जित क्षेत्रों में प्रयुक्त नहीं हैं। यदि मैं यह समझता कि अपवर्जित क्षेत्रों में रहने वाले सभी लोग उतने ही सीधे सादे हैं जितने कुछ आदिम-जातियों के लोग हैं तो मैं उनके लिये कष्ट नहीं उठाता। किन्तु उनमें से कुछ लोग बहुत प्रगतिशील हैं। इन पर्वतों में भारत के अन्य भागों के लोग आ कर बसते थे। यदि दीनापुर और शिलांग जैसी जगहों में रहने वाले लोग न्याय-प्रशासन के प्रयोजन के लिए आदिम जातियों के लोग समझे गये तो यह बहुत दुर्भाग्य की बात होगी। श्रीमान, मेरा निवेदन है कि संविधान में एक उपबन्ध इस आशय का है कि न्याय-प्रशासन के लिये, राज्यपाल नियम बना सकता है, अर्थात वह स्वयं विधि बना सकता है। भारतीय दंड-संहिता बनाने के लिये, अथवा भारतीय दंड-संहिता अथवा अपराध प्रक्रिया संहिता अथवा असैनिक प्रक्रिया-संहिता को संशोधित करने के लिए 320 व्यक्तियों की आवश्यकता होगी किन्तु एक राज्यपाल न्याय-प्रशासन के सम्बन्ध में विधि बना सकेगा जो आदिम जातियों के लोगों पर ही लागू नहीं होगी बल्कि पंजाब, अथवा बंबई, अथवा बंगाल के सुसभ्य लोगों पर भी लागू होगी। श्रीमान, क्या यह दुर्भाग्य की बात नहीं है? क्या इसकी अपेक्षा यह कहना अच्छा न होता कि स्थिति के अनुसार रूप-भेद करके वहां सभी विधियां प्रयुक्त होंगी। इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं समाप्त करता हूं। यदि मैंने किसी व्यक्ति को धन्यवाद नहीं दिया है तो यह बात नहीं है कि मैं उसे भूल गया था। मैं हृदय से धन्यवाद देता हूं मनुष्य के रोगों के तथा राजनैतिक रोगों के भी उस डॉक्टर को जिसने हमारे दल में छिपकर इस संविधान की रचना की है, अर्थात मैं डॉ. पट्टाभि सीतारमय्या को हृदय से धन्यवाद देता हूं।

***श्रीमती हंसा मेहता** (बंबई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, अब हम अपनी यात्रा समाप्त करने जा रहे हैं और हमें हर्ष है कि आखिर यह सुदिन भी आ गया।

मेरी यह इच्छा थी कि हम इस यात्रा में कम समय लगाते। समय का बहुत महत्व होता है। मनोविज्ञान की दृष्टि से जिस घड़ी का महत्व होता है यदि वह बीत जाती है तो चाहे कोई चीज कितनी ही सुन्दर क्यों न हो उसमें दिलचस्पी नहीं रह जाती। यही इस संविधान के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। इस सभा में तथा इसके बाहर पूछा जाता है कि यह संविधान अच्छा है या नहीं और आखिर यह किस प्रकार व्यवहार में आयेगा यदि इससे लोगों का हितसाधन होगा तो यह सुन्दर संविधान कहा जायेगा। यदि इससे उनकी हित हानि होगी तो यह एक बुरा संविधान कहा जायेगा। भविष्य के निर्वाचकों को चाहिये कि वे ठीक तरह के लोगों को चुनें ताकि वे इस संविधान द्वारा लोगों का हितसाधन करें इस लिये जिम्मेदारी लोगों की ही है। एक बात मैं कहूंगी और वह यह है कि जिस स्थिति में हम थे उसमें इससे अच्छा संविधान बनाया नहीं जा सकता था। इस सभा में इतना मत-वैषम्य होने पर भी यह एक आश्चर्य की बात है कि इस संविधान में जो कुछ है कम से कम उसके लिये तो सभा की सहमति प्राप्त हो गई। एक ओर सेठ गोबिन्द दास गौ-रक्षा का बीड़ा उठाये हुए थे और दूसरी ओर प्रो. के.टी. शाह निम्न स्तर के लोगों के उत्थान का बीड़ा उठाये हुए थे। इन दो बिल्कुल ही भिन्न विचार रखने वालों के बीच में अनेक मत रखने वाले अनेक लोग थे। अन्त में बोलने वाले वक्ता महोदय एक अच्छे उदाहरण होंगे।

इन सब बातों को दृष्टि में रखते हुए और हमें जिन पेचीदे प्रश्नों का हल करना पड़ा है उन्हें भी दृष्टि में रखते हुए, मैं यह कह सकती हूं कि हम अपने कार्य में असफल नहीं रहे हैं। हमारे लिये सबसे कठिन प्रश्न अल्पसंख्यकों का प्रश्न रहा है। संविधान में किसी स्थल पर भी हम ने "अल्प संख्यकों" की परिभाषा नहीं की है। हमारे अन्तिम शासकों ने हमें जो परिभाषा प्रदान की उसी को हमने स्वीकार कर लिया। उन्होंने धर्म और सम्प्रदायों के आधार पर अल्पसंख्यक तैयार किये ताकि वे फूट डाल कर शासन करते रहें। उस नीति का परिणाम यह हुआ है कि देश का विभाजन हो गया है। हम नहीं चाहते कि देश का फिर विभाजन हो। आखिर अल्पसंख्यक चाहते क्या हैं? उनकी मांगें हो ही क्या सकती हैं। संविधान द्वारा विधि के समान संरक्षण की पद समता तथा अवसर-समता की तथा धार्मिक अधिकारों की प्रत्याभूति दी गई है। अल्पसंख्यक और काहे की मांग कर सकते हैं? यदि वे विशेषाधिकार चाहते हैं तो यह लोकतंत्र की भावना के विरुद्ध है। वे विशेषाधिकारों की मांग नहीं कर सकते। केवल अनुसूचित जातियों के लिये अपवाद किया जा सकता है। उन्हें हिन्दू समाज में बहुत काल तक उत्पीड़न सहना पड़ा है और यदि उनके लिये कोई अपवाद किया गया तो वह उस उत्पीड़न के निराकरण की ओर एक कदम होगा। इस सम्बन्ध में मैं यह कहूंगी कि अस्पृश्यता का अंत करना ही हमारा सबसे बड़ा कार्य रहा है। इस पर आने वाली पीढ़ियां बहुत गर्व करेंगी।

मूलाधिकार समिति में इस प्रश्न पर विचार-विमर्श करते समय हमने एक प्रश्न और उठाया था। हमारी प्रबल इच्छा थी कि पर्दे की प्रथा को समाप्त करने पर भी विचार किया जाये। यह एक अमानुषिक प्रथा है और भारत के कुछ भागों में अब भी चलन में है। दुर्भाग्य से हमसे यह कहा गया कि इस प्रश्न को उठाने से कुछ लोगों की धार्मिक भावनाओं पर आघात पहुंचेगा। जहां तक हिन्दू धर्म का

[श्रीमती हंसा मेहता]

सम्बन्ध है उसमें पर्दे का कोई स्थान नहीं है। इस्लाम में उसका स्थान है। किन्तु मेरी यह धारणा है कि इस्लाम को इस दोष से मुक्त कर देना चाहिये। यदि किसी दोष को धर्म के नाम पर स्वीकार किया जाता है तो उसकी प्रत्याभूति संविधान द्वारा नहीं दी जा सकती है। मुझे आशा है कि हमारे मुसलमान मित्र यह स्मरण रखेंगे कि यह प्रश्न इस समय नहीं तो बाद को अवश्य ही विधान मंडलों के सामने रखा जायेगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि मूलाधिकार विषयक अध्याय बहुत महत्वपूर्ण है किन्तु साथ ही उसके आगे का अध्याय अर्थात राज्य की नीति के निदेशक तत्व विषयक अध्याय भी, मेरे विचार से बहुत महत्वपूर्ण अध्याय है। इस अध्याय के दो विषयों की ओर मैं इस सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहती हूं। पहला विषय मादक-द्रव्य-प्रतिषेध का विषय है। हाल में बंबई के प्रधान मंत्री महोदय ने कहा था कि वे जो कुछ कर रहे हैं संविधान के अनुसार ही कर रहे हैं। मैं इसमें कुछ विभेद करना चाहती हूं। मादक-द्रव्य-प्रतिषेध के सम्बन्ध में गांधी जी का भी नाम लिया जाता है। किन्तु गांधी जी की यह इच्छा थी कि राज्य शराब न बनाये और न उसे बेचे और शराब की दूकानें भी बन्द कर दी जायें। ताकि जिन लोगों को पीने की लत पड़ी हुई है उनके लिये कोई प्रलोभन न रहे। किन्तु, मेरे विचार से, गांधी जी की यह कभी भी इच्छा नहीं थी कि हम एक पुलिस सेना का संगठन करें गांधी जी कभी यह नहीं चाहते थे कि अच्छे साधनों से जो धन प्राप्त हो वह पुलिस पर व्यय किया जाये। हम दूषित आय को छोड़ देने के लिए तैयार हैं किन्तु हम उत्पादन विभाग की पुलिस पर अच्छे साधनों से प्राप्त लाखों रुपये क्यों खर्च करें? देश में इस समय बहुत भ्रष्टाचार है। इससे भ्रष्टाचार का एक और मार्ग खुल जायेगा। एक अन्य बात यह है कि इससे विक्रय कर चिरस्थायी हो जायेगा। लोग करों के भार से दबे जा रहे हैं विक्रय कर के भार से वह कराहने लगे हैं इसलिये इस सम्बन्ध में मैं यह विभेद करना चाहती हूं—संविधान में सन्निहित मादक-द्रव्य-प्रतिषेध-विषयक नीति से तो मैं सहमत हूं किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि आज विभिन्न प्रान्तों में इस नीति को कार्यान्वित करने के लिये जिस प्रणाली का अनुसरण किया जा रहा है उससे मैं सहमत हूं।

एक अन्य विषय, जिसकी ओर मैं सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहती हूं, सार्वजनिक-असैनिक-संहिता का विषय है। मेरे विचार से इसका महत्व राष्ट्र-भाषा से भी अधिक है। इस देश में बहुत सी स्वीय विधियां हैं और इन स्वीय विधियों के कारण आज हमारा राष्ट्र खंडित है। इसलिये यदि हम राष्ट्र को सुगठित करना चाहते हैं तो एक ही असैनिक-संहिता को व्यवहार में लाना बहुत आवश्यक है। किन्तु इस सम्बन्ध में यह स्मरण रखना चाहिये कि हम जिस असैनिक-संहिता को स्वीकार करें वह या तो देश में प्रचलित प्रगतिशील स्वीय विधियों के समान हो या उनसे अधिक प्रगतिशील हो। अन्यथा वह एक प्रतिगामी संहिता होगी और सब लोग उसे स्वीकार नहीं करेंगे।

यदि पुरुष स्त्रियों से रक्षा के सम्बन्ध में इस संविधान में उपबन्ध रखने की मांग करते तो संसार उन्हें बहुत छोटा समझता। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि इस संविधान में इस प्रकार का कोई उपबंध नहीं है। अन्यथा पुरुष संसार में अपना मुंह नहीं दिखा सकते।

श्रीमान, मैंने इसे एक वर्ग की बात समझी है कि मेरा स्वतंत्र भारत के संविधान-निर्माण से सम्बन्ध रहा है। मुझे आशा है कि तीन वर्ष पूर्व इस सभा में प्रधान मंत्री महोदय ने जो प्रस्ताव उपस्थित किया था और जिसे पारित करके सभा ने प्रस्तावना का रूप दिया है उससे लोगों की जो आशायें हो गई हैं वे पूरी होंगी। मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूं कि वे पूरी हों। उस प्रस्तावना द्वारा दिये हुए वचन के पूर्ण होने पर ही यह देश अपनी प्राचीन प्रतिष्ठा को प्राप्त होगा।

***श्री लोकनाथ मिश्रः** अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि संविधान-निर्माण में मेरा इतना कम योग रहा है कि हमारे अध्यक्ष महोदय भी, जिन्होंने प्रत्येक व्यक्ति के प्रति उदारता दिखाई है, मेरा नाम तक नहीं जानते।

***अध्यक्षः** मुझे खेद है।

***श्री लोकनाथ मिश्रः** इससे यह प्रकट होता है कि मैंने यथोचित कार्य नहीं किया है मुझे इसका खेद है और इसके लिये मैं अपने अध्यक्ष महोदय को दोष नहीं देता। किन्तु, श्रीमान कर्तव्य-पालन की दृष्टि से मैं कहूंगा कि जिस संविधान को हम देश को तथा आने वाली पीढ़ियों को प्रदान करने जा रहे हैं उससे मेरे हृदय में कौन से विचार उत्पन्न हुए हैं।

मेरी यह धारणा है, और यही सच भी है, कि हमारा यह संविधानिक अधिनियम आधुनिक संसार की एक सभ्य और महान कृति समझी जायेगी। किन्तु मैं किसी प्रकार की आत्म-प्रशंसा नहीं करना चाहता और न मसौदा समिति की, अथवा माननीय सदस्यों की, अथवा अपने माननीय अध्यक्ष महोदय की, अथवा किसी व्यक्ति की प्रशंसा करना चाहता। इसका कारण यह है कि हमने अपने कर्तव्य का पालन किया है और यथाशक्ति पालन किया है और लोग ही हमारे श्रम के सम्बन्ध में निर्णय कर सकते हैं। वास्तव में हलवे का स्वाद चख कर ही जाना जा सकता है। जब लोग उसे चखेंगे तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि उसका स्वाद कैसा है। उसके स्वादिष्ट होने पर भी यदि वह स्वास्थ्य वर्द्धक सिद्ध न हुआ तो उस पर आपत्ति की जा सकती है। इसलिये बिना अपनी प्रशंसा किये हुए मैं यह कहूंगा कि इस संविधान का आरम्भ तो बहुत ऊंचे शब्दों से हुआ है किन्तु इसके आदर्श निरर्थक ही हैं। इसमें न्याय, स्वतंत्रता, समता और बन्धुता का वचन दिया गया है, जिससे व्यक्ति की गरिमा तथा राष्ट्र की एकता सुनिश्चित होगी। परन्तु व्यक्ति! राष्ट्र!

मेरे मित्र कह चुके हैं कि सरदार पटेल ने जादू करके भारत में राजनैतिक एकता और संभवतः भौगोलिक एकता भी स्थापित की है। किन्तु मैं देखता हूं कि इस संविधान में कहीं भी यह नहीं कहा गया है कि वह राष्ट्र कैसा है, वह व्यक्ति कैसा है और भारत का वह कौन सा व्यक्तित्व है जिसके कारण भारत भारत है और जिसका हम पोषण करने जा रहे हैं। मैं देखता हूं कि इस संविधान में कहीं भी भारत के व्यक्तित्व का वर्णन नहीं है उस व्यक्तित्व का जिसके कारण भारत अन्य राष्ट्रों से भिन्न है। मैं संविधान में किसी स्थल पर भी इसे वर्णित नहीं देखता कि वह व्यक्ति कौन है, उसका प्रारब्ध कैसा है और उसका पुरुषार्थ

[श्री लोकनाथ मिश्र]

कैसा है, और राष्ट्र आखिर किस आदर्श के लिये प्रयत्न करे और व्यक्ति, परिवार तथा देश किस आदर्श को लेकर प्रयत्नशील हो।

जब हम मूलाधिकारों को उठाते हैं तो हम एक बात देखते हैं। उनका वर्णन करते हुए चाहे जो कुछ भी कहा गया हो किन्तु व्यवहार में उनसे इच्छित फल प्राप्त नहीं होगा। उनके द्वारा स्वतंत्रता तथा समता का वचन दिया गया है। मैं यह कहूंगा कि स्त्रियों और पुरुषों की समता तथा स्वतंत्रता के सम्बन्ध में मेरे हृदय में एक विचार उठता है। यदि दुर्भाग्य से स्त्रियों ने आधुनिकता को अपनाया और सभी मामलों में पुरुषों से समता तथा स्वतंत्रता की मांग की और उनकी प्रतिस्वर्धिनी बन गईं तो मुझे विश्वास है कि इतने वर्षों से हम जिस सभ्यता को पोषण करते आये हैं उसका अन्त हो जायेगा। मेरा निवेदन है कि भारत का अवश्य ही अपना एक व्यक्तित्व है। गांधी जी कहते है कि भारत को संसार को एक संदेश देना है और उसी संदेश को देने के लिये मैं जीवन धारण किये हुए हूं। यदि भारत उस विचार धारा का परित्याग करता है तो मेरे यहां रहने से कोई लाभ न होगा। मैं इस सभा से पूछता हूं कि भारतीय राष्ट्र के किस व्यक्तित्व का हम निर्माण करना चाहते हैं और संसार को तथा आधुनिक सभ्यता को कौन सा संदेश देना चाहते हैं। मेरा निवेदन है कि हमने केवल नकल की है। इसे भारतीय संविधान न कह कर मैं इसे भारत का आंग्ल-अमरीकी संविधानिक अधिनियम कहूंगा। इसका उचित नाम यही है।

हमने वयस्क मताधिकार प्रदान किया है। यह सुनाई तो अच्छा देता है किन्तु इस वयस्क मताधिकार को एकाएक देने से तथा एकाएक प्रयोग करने से उन लोगों को ही हानि सहन करनी पड़ेगी जो उसे प्रयोग करेंगे। उदाहरणार्थ, सामान्य निर्वाचनों में लगभग बीस करोड़ लोग मत देंगे। अभी वे नहीं जानते कि वे किस लिये मत देंगे। उन्हें केवल यह अधिकार प्राप्त हो जायेगा। निर्वाचनों में कई दल भाग लेंगे और कई उम्मीदवार एक दूसरे के विरोध में खड़े होंगे और वे लोगों के पास जा कर कहेंगे, "हम आपकी अमुक अमुक इच्छा पूरी करेंगे, अन्य उम्मीदवारों को मत न दीजिये, हमें मत दीजिये।" इससे उनमें केवल अधिकार-भावना जाग्रत होगी और कर्तव्य भावना जाग्रत नहीं होगी। वे किसी दल विशेष के पक्ष में मत देंगे, जो उनकी इच्छा कभी भी पूर्णतया पूरी नहीं कर सकेगा। उनकी इच्छायें और भी प्रबल हो उठेंगी। इससे समाज में अव्यवस्था फैल जायेगी और उसका समुचित विकास न हो पायेगा। इस लिये मेरा निवेदन है कि हमने दलबन्दी के आधार पर सरकार बनाने की इंग्लिस्तान की जो प्रणाली अपनाई है उससे इस समय हानि ही होगी किन्तु हम आशा करते हैं कि हमारे राजनीतिज्ञ तथा हमारे नेता अपने उत्तरदायित्व को समझेंगे और लोगों को इस प्रकार शिक्षित करेंगे कि उन्हें एकाएक जो अधिकार दिया गया है उसका सर्वोत्तम प्रयोग करने में वे समर्थ हों।

मेरा यह विचार है, और यह मेरे कई मित्र और विशेष तथा माननीय श्री प्रकाशम भी कह चुके हैं कि यह संविधान एक उत्कृष्ट संविधान हो सकता था और वह तब जब कि इसका निर्माण पंचायत-राज के आधार पर किया जाता क्योंकि अभी भी पंचायत-राज हमारे रक्त में है और लोग उसे पसंद करते हैं। इससे हमारे देश

में छोटे-छोटे लोकतंत्रात्मक राज्य स्थापित हो जाते और लोकतंत्र प्रेमी लोग अपना उत्तरदायित्व समझ कर उत्साह तथा हर्ष से अधिकार प्रयोग करते हैं। किन्तु अब इस संविधान के अधीन दो वर्ग स्थापित हो जायेंगे—एक तो शासकों का वर्ग होगा, जो शिखर पर होगा, और दूसरा वर्ग उन साधारण लोगों का होगा जो सबसे नीचे होंगे, और पांच वर्ष में एक बार मत देंगे। इनके बीच में मध्यवर्ग होगा जो बिल्कुल ही कुचल दिया जायेगा। मेरा निवेदन है कि यदि मध्यवर्ग कुचल दिया गया तो देश में बुद्धिमान लोगों का बिल्कुल अभाव हो जायेगा तब कहा नहीं जा सकेगा कि देश का भविष्य क्या होगा।

मैं अब मूलाधिकार विषयक एक अन्य अनुच्छेद, अर्थात अनुच्छेद 31 उठाता हूं जो सम्पत्ति के विषय में है। सम्भवत: सारे संविधान में यह सबसे अधिक अनर्गल अनुच्छेद है। प्रत्यक्षत: इस अनुच्छेद में कहा गया है कि 26 जनवरी 1950 तक जो कुछ न्याय्य नहीं था वह उसके पश्चात् न्याय्य हो जायेगा। उदाहरणार्थ, संयुक्त प्रान्त के विधेयक को अथवा बिहार के विधेयक को लीजिये, जो इस समय लम्बित है। किन्तु यदि उनमें से कोई विधेयक इस संविधानिक अधिनियम के प्रारम्भ होने से पूर्व पारित कर दिया जाता है तो संविधान के पारित होने पर इस अनुच्छेद के अधीन उस अधिनियम के उपबंध न्याय्य नहीं होंगे, किन्तु यदि वही विधेयक अथवा उसके अधिकांश खंड उड़ीसा के किसी विधेयक में समाविष्ट कर लिये जाते हैं और वह वहां की विधान सभा द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् पारित किया जाता है तो वह न्याय्य हो सकता है। मेरी समझ में नहीं आता कि जो उपबंध इस समय न्याय्य नहीं हैं वे बाद को कैसे न्याय्य हो जायेंगे। इसके अतिरिक्त उपखंड (6) को ही देखिये। इस संविधान के प्रारम्भ से 18 महीने पूर्व जो कुछ पारित किया गया है वह न्याय्य नहीं होगा और उसके पश्चात जो कुछ पारित किया गया है वह न्याय्य होगा। इस विभेदकारी उपबंध को किसी भी संविधान में, और विशेषकर उसके मूलाधिकार-विषयक अध्याय में स्थान नहीं दिया जा सकता। इसके अतिरिक्त हमने इस अनुच्छेद में "सम्पत्ति", "कब्जा", "अर्जन" तथा "सार्वजनिक प्रयोजन" की परिभाषा नहीं की है। उदाहरणार्थ उड़ीसा में हमारी भू-राजस्व तथा भू-अवधि समिति इस परिणाम पर पहुंची है कि ज़मींदारी के उत्पादन का अर्थ यह नहीं है कि जो भूमि कब्ज़े में हो, अथवा अर्जित की गई हो, उसे सार्वजनिक प्रयोजन के लिये ले लिया जायेगा। इसका कारण यह है कि प्रत्येक ज़मींदार के दो अधिकार हैं—लगान वसूल करने का अधिकार और अपनी भूमि में खेती करने का अधिकार। यदि हम उसकी निजीभूमि को छोड़ देते हैं और केवल उसके लगान वसूल करने के अधिकार को समाप्त करते हैं तो आखिर उसकी कौन-सी सम्पत्ति चली जायेगी कि उसे मुआविजा दिया जाये? यदि हम थोड़ी देर के लिये यह मानें कि हम सामन्तशाही को पूर्णतया मिटा देते हैं तो हम भू-राजस्व को भी मिटा देते हैं और फिर उसके स्थान पर किसी कर को लगाते हैं—और तो क्या कुछ सम्पत्ति को जब्त कर लिया जा रहा है अथवा उससे कब्जा छुड़ाया जा रहा है। किन्तु उसके लिए मुआविजा दिया जा रहा है। हमने इन अयुक्त बातों को अकारण रखा है। यदि हम केवल अनुच्छेद 31 के खंड (1) को रखते तो पर्याप्त होता। इन उपबंधों के फलस्वरूप अकारण कलह होगा। मैं किसी को दोष नहीं देता किन्तु मैं यह कहूंगा कि इस अनुच्छेद को बनाने में समझौते की अत्यधिक चिन्ता की गई है। इससे इसका संकेत मिलता है कि किन विचारों से प्रेरित होकर इस संविधान का निर्माण किया गया है।

[श्री लोकनाथ मिश्र]

इसलिये, मेरा निवेदन है कि यह संविधान अधिक से अधिक लोगों को प्रसन्न करने के लिये बनाया गया है किन्तु यह अनेक विचारों और विचार-धाराओं का मिश्रण हो गया है। इसका आधार इतना सुव्यवस्थित तथा सुगठित नहीं है कि हम एक सूत्र में बंधे रह सकें। इसका एकमात्र कारण यह है। वर्षों से आधुनिक विचारों को अपनाये हुए रहने के कारण हम उनके रंग में इतने रंग गये हैं कि हम अपने को भूल गये हैं। क्या इस देश की भूमि इतनी ठोस नहीं थी कि उस पर हमारे भावी संविधान की नींव रखी जा सकती? यदि आप एक ऐसी सभ्यता को अंगीकार करना चाहते हैं जो अभी इस देश में नहीं परखी गई है तो आप सभी सच्ची बातों को मिटा देंगे। इस दशा में मैं कह नहीं सकता कि भविष्य में हमें किस स्थिति का सामना करना पड़ेगा। श्रीमान, हमने वयस्क मताधिकार प्रदान किया है। यह एक अच्छी बात है। किन्तु मेरा निवेदन है कि इसके साथ हमें निर्वाचन के लिये खड़े होने वाले लोगों के सम्बन्ध में अधिक आयु रखनी चाहिये थी। मेरे विचार से अवर सदन के लिये खड़े होने वाले लोगों की कम से कम आयु तीस वर्ष और उत्तर सदन के लिये खड़े होने वाले लोगों की कम से कम आयु 35 वर्ष रखनी चाहिये थी। इससे इन मामलों पर हमारा एक प्रकार का नियंत्रण रहता और हमारे देशवासी समझदारी से काम करते।

इसके अतिरिक्त हमें विधान मंडलों के लिये खड़े होने वाले लोगों के लिये ऊंची योग्यता निश्चित करनी चाहिये थी। हम जानते हैं कि आगे चलकर क्या होने वाला है। हम जानते हैं कि यह संविधान संसदात्मक प्रणाली पर आधृत है और किसी संसदात्मक प्रणाली की सफलता संसद के सदस्यों पर निर्भर करती है। यदि उसके सदस्य संयमशील, सत्यनिष्ठ, बुद्धिमान तथा सुयोग्य न होंगे तो, मेरे विचार से, संसदात्मक लोकतंत्र विफल हो जायेगा। किन्तु मैं यह देखता हूं कि हमारी संसदात्मक प्रणाली केवल इस कारण विफल होगी कि हमने उन लोगों के सम्बन्ध में, जो एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी को स्वीकार करेंगे कोई योग्यता निश्चित नहीं की है। हमें सदस्यों के लिये यह योग्यता निश्चित करनी चाहिये थी कि वे ईमानदार होने चाहिये और उन लोगों में से न होने चाहिये जो लोगों का शोषण करते हैं और चोर बाज़ार को बढ़ावा देते हैं तथा उनके प्रति लोगों की श्रद्धा तथा उनका विश्वास होना चाहिये। किन्तु क्यों हमें तुरन्त ही स्वार्थों के संघात, प्रतिस्पर्धा तथा अव्यवस्थित जीवन का दर्शन होने जा रहा है? इसका परिणाम यह होगा कि संसदात्मक लोकतंत्र के नाम पर अराजकता फैल जायेगी।

अब श्रीमान, मैं दो शब्द केन्द्रीकरण के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं। एक सुदृढ़ राज्य का निर्माण करने के नाम पर हमने शक्ति का ऐसा संकेन्द्रण किया है कि अपनी शक्ति के कारण ही केन्द्र की कमर टूट जायेगी। चाहे पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल कितने ही अच्छे क्यों न हों किन्तु उनसे मैं उतनी ही दूरी पर हूं जितनी दूरी पर दिल्ली से पुरी में मेरा घर है। मैं उनसे इस तरह बात नहीं कर सकता जैसे मैं किसी अपने आदमी से करता हूं। जीवन में हम अपने परिवार, अपने गांव, अपने जिले और अपने प्रान्त के साथ चलते हैं। एकाएक सारे भारत की दृष्टि से विचार करना एक अनर्गल बात है। सम्भव है कि कुछ विषयों के सम्बन्ध में केन्द्रीकरण लाभप्रद सिद्ध हो। किन्तु हमने केन्द्र को इतना शक्तिशाली बना दिया है और प्रान्तों को इतना शक्तिहीन

बना दिया है कि मेरे विचार से वास्तव में प्रान्तों के विधान मंडल अथवा प्रान्तों के मंत्री भी स्वयं कोई कार्य नहीं कर सकेंगे। वास्तव में इस संविधान के फलस्वरूप लोगों में अनुत्तरदायी होने की प्रवृत्ति बढ़ेगी और उन्हें पांच वर्ष में एक बार मत देकर ही संतोष कर लेना होगा। वे केवल केन्द्र की ही चिन्ता करेंगे और किसी न किसी लाभ के लिये केन्द्र के शक्तिसम्पन्न लोगों की खुशामद करते रहेंगे। इस प्रकार हमने इस आशा से इस उत्तरदायित्व-विहीन संविधान की रचना की है कि लोग उत्तरदायी शासन को प्राप्त कर सकें।

इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि हमने बहुत ईमानदारी से परिश्रम करके तथा सर्वोत्कृष्ट उद्देश्य से इस संविधान को पारित किया है और अब हमें देखना है कि व्यवहार में यह कैसा रूप धारण करता है। यह हमारा कर्तव्य है कि हम इस संविधान का पोषण करें। और लोगों को इस संविधान में सन्निहित सिद्धान्तों की शिक्षा दें। यह एक महान कार्य है और मुझे आशा है कि हमारा देश तथा केन्द्र के हमारे नेता इस कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ होंगे। यदि वे गलत रास्ते पर जायेंगे तो केन्द्र के बहुत शक्तिशाली होने के कारण सारा राष्ट्र ही गलत रास्ते पर चला जायेगा। मुझे तो यह दिखाई देता है कि सही रास्ते पर चलने के बजाय उसके गलत रास्ते पर चलने की ही अधिक सम्भावना है। जय हिन्द।

***अध्यक्ष:** अब सभा तीन बजे तक के लिये स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा दोपहर के भोजन के लिये तीन बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

संविधान सभा दोपहर के भोजन के पश्चात् 3 बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में फिर समवेत हुई।

***श्री जदुवंश सहाय** (बिहार: जनरल): श्रीमान, इस संविधान के विभिन्न अंगों के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा जा चुका है। मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूं जिन्होंने इस संविधान के सम्बन्ध में निराशा तथा असंतोष की भावना प्रकट की है। मेरे विचार से, श्रीमान, हमने जो कुछ किया है उसके कारण हमें किसी प्रकार का खेद न होना चाहिये। जिन सदस्यों ने इस संविधान की कड़ी आलोचना की है उन्होंने केवल अपने उत्साह की कमी का परिचय दिया है।

वास्तव में तथ्य यह है कि हमारे राष्ट्र का जन्म हाल ही में हुआ है और हमें भी लोकतंत्र की कला सीखनी है। किसी पुस्तक द्वारा लोकतंत्र की शिक्षा नहीं दी जा सकती। लोकतंत्र का विकास होता है। किसी राष्ट्र के लोगों के चरित्र, उनकी सत्यनिष्ठा तथा ईमानदारी के कारण और लोकतंत्रात्मक सिद्धान्तों के प्रति उनके प्रेम तथा उन सिद्धान्तों का अनुसरण करने के लिये उनके उत्साह के कारण ही उनका संविधान सफल अथवा विफल होता है। किसी देश का संविधान उसके निर्जीव अक्षरों के कारण सफल नहीं होता चाहे वे अक्षर कितने ही सुन्दर और उज्जवल क्यों न हों। उसका विकास देशवासियों के चरित्र के फलस्वरूप होता है। देश की भूमि में ही संविधान का बीज बोने से यह उपजता है और उसका विकास होता है। यदि भूमि पथरीली अथवा ऊसर हो तो चाहे संविधान का बीज

[श्री जदुवंश सहाय]

कितना ही अच्छा क्यों न हो वह उपज नहीं सकता, अर्थात् इस दशा में चाहे संविधान कितना ही अच्छा क्यों न हो और कितनी ही उत्कृष्ट भाषा में क्यों न लिखा गया है वह हमें अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंचा सकता। किन्तु श्रीमान, मुझे अपने देशवासियों की निष्ठा पर विश्वास है। मुझे आने वाली पीढ़ियों पर भी विश्वास है। मैं समझता हूं कि हमने जो कुछ किया है उसके कारण हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं है। संविधान में चाहे हम कितनी ही प्रत्याभूतियां क्यों न दे दें और जो बातें रह गई हैं उनका भी चाहे उल्लेख क्यों न कर दें किन्तु इनके कारण हम अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंच सकते। सब कुछ उन लोगों पर निर्भर है जो संविधान को व्यवहार में लायेंगे। सब कुछ इस पर निर्भर है कि हम सहिष्णुता की भावना का किस प्रकार विकास करते हैं चाहे हमारा संविधान कैसा ही क्यों न हो और हमारी विधि की शब्दावली कैसी ही क्यों न हो? सब कुछ इस पर निर्भर है कि हम पद-दलितों के प्रति तथा उन लोगों के प्रति जो अपने को अल्पसंख्यक कहते हैं कितने प्रेम का परिचय देते हैं। हम भले ही संविधान में लिख दें कि प्रत्येक घर तथा परिवार में अस्पृश्यता का अन्त किया जाता है किन्तु इससे कुछ प्राप्त नहीं होता। जो लोग इस समय जीवन के अनेक साधनों से वंचित हैं उनसे हमें प्रेम करना चाहिये। तथा उनके प्रति सहानुभूति दिखानी चाहिये। हमारे उद्देश्य की पूर्ति इस पर निर्भर नहीं है कि हम किस प्रकार संविधान बनायें और उस में किस प्रकार के अनुच्छेद रखें। वह इस पर निर्भर है कि हम कितने चरित्रनिष्ठ और और हमारा राष्ट्र कितना सजग है।

मैं उन लोगों में से नहीं हूं जो इस संविधान के कारण हताश हुये हैं। इसलिये मैं इसके केवल एक या दो विषयों पर निरपेक्ष दृष्टि से विचार करूंगा।

श्रीमान, हमने देश की स्वतंत्रता के लिय संग्राम किया और उसे प्राप्त किया। किन्तु हमने राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त की है। पच्चीस अथवा तीस वर्ष तक प्रत्येक देशभक्त और स्वतंत्रता का प्रत्येक सिपाही यही नारा लगाता रहा कि अंग्रेज़ी राज का अंत हो। उसने कोई भी अर्थ-विषयक नारा नहीं लगाया। अंग्रेज़ी राज्य का अन्त हो गया है और हमें राजनैतिक प्रभुता प्राप्त हुई है। इसलिये संविधान की प्रस्तावना में हम यह घोषणा करने जा रहे हैं कि भारत एक स्वतंत्र सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य है यद्यपि हम यह घोषणा 26 जनवरी को करने जा रहे हैं किन्तु संसार के राष्ट्र हमारे देश के इस स्वरूप को स्वीकार कर चुके हैं। पिछले तीस वर्षों में अर्थात्मक लोकतंत्र के लिये अधिक संघर्ष नहीं किया गया जिसका परिणाम यह हुआ है कि संविधान में भी हमें एक ऐसी झलक दिखाई देती है कि समाज के आर्थिक ढांचे के लिये खतरा उपस्थित हो सकता है। अभी तक समाज का जो आर्थिक ढांचा रहा है वह आगे भी रहेगा। इसी कारण संघर्ष की सम्भावना है। आज हमारा देश एक संकट का सामना कर रहा है। कृषि के उत्पादन के लिये तथा आद्योगिक पदार्थों के उत्पादन के लिये संकटापन्न स्थिति उपस्थित है और हम कोई हल नहीं निकाल सके हैं। हम जो कुछ कर सकते हैं वह सब कर रहे हैं किन्तु हमें उतने शीघ्र सफलता प्राप्त नहीं हो रही है जितने शीघ्र हम चाहते हैं। इसका कारण क्या है? इसका कारण यह है कि एक ऐसी स्थिति उपस्थित

है जिससे हमारे समाज का आर्थिक ढांचा ही खतरे में पड़ गया है और उसमें आधारभूत परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

दुहराये हुए संविधान का खण्ड 31 सम्पत्ति के विषय में है। यदि मैं यह कहूं कि हम इस प्रश्न को बिना किसी उत्साह के और बहुत हिचकिचा कर हल कर रहे हैं तो मुझे आशा है कि आप मुझे क्षमा करेंगे। हम देख रहे हैं कि हमारे पड़ोस में ही चीन, बर्मा तथा अन्य देशों में ऐसी विध्वंसकारी शक्तियां जिनसे हमारा देश कभी परिचित नहीं रहा बाढ़ के समान आगे बढ़ रही हैं। साम्यवाद उन देशों में छा जाता है जो कृषि की दृष्टि से पिछड़े हुए हों। वह चीन में छा गया है और बर्मा में भी छा जायेगा हम उसका सामना किस प्रकार करेंगे? हमने जमींदारी प्रथा को उत्सादन करने का संकल्प किया है। अनुच्छेद 31 में हम यह देखते हैं कि उसके फलस्वरूप बिहार, संयुक्त प्रान्त तथा मद्रास के समान कुछ प्रान्त लाभप्रद स्थिति को प्राप्त होंगे, यद्यपि हम बहुत आगा पीछा करने पर इसके लिये सहमत हुए हैं, किन्तु बंगाल और सम्भवतः आसाम और उड़ीसा उससे लाभ नहीं उठा सकेंगे। ये प्रान्त अभी तक अपनी विधान सभाओं में इस सम्बन्ध में कोई विधेयक नहीं लाये हैं। क्या आप यह समझते हैं कि हम साम्यवाद का सामना इस प्रकार कर सकते हैं। गोलियों से अथवा सेना से, अथवा पुलिस से साम्यवाद का दमन नहीं किया जा सकता। उसका सामना अन्य प्रकार करना होगा। उसके मूल कारण को ढूंढ निकालना होगा। इस रोग का कारण भूख से तथा अन्य कारणों से पीड़ित देश के जनसाधारण का असंतोष ही है। हम सुनते हैं कि बंगाल में बमों, गोलियों और तेजाब के बल्बों का प्रयोग किया जाता है और ट्रामगाड़ियों को जला दिया जाता है। बंगाल सरकार इस समय अपने घर के प्रश्नों में ही उलझी हुई है। वह अपने प्रान्त में सामन्तशाही के उत्सादन के लिये कोई विधेयक नहीं ला सकी है। 26 जनवरी के पश्चात् वह उस लाभ से वंचित हो जायेगी जो हमने इस संविधान के अनुच्छेद 33 के खण्ड (4) और (6) द्वारा प्रदान किया है। केवल कलकत्ता तथा अन्य बड़े-बड़े शहरों में ही नहीं किन्तु देहात में भी हम देखते हैं कि साम्यवादियों का प्रभाव बढ़ रहा है। संथालों, आदिवासियों तथा किसानों पर उसका प्रभाव है। वे सब साम्यवादियों के नारों तथा प्रचार के शिकार हो रहे हैं। गांवों में पुलिस भेज कर आप इस प्रभाव को समाप्त नहीं कर सकते। स्थिति को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि यह असमभव है। संविधान में हमने इस प्रश्न को बिना किसी उत्साह के हल करने का प्रयास किया है। विचार-धाराएं आपस में टकराती रही हैं। दो विचार धारायें आपस में टकराती रही हैं। एक विचार-धारा समाज के पुराने आर्थिक ढांचे को बनाये रखने तथा उसे सुस्थिर करने के पक्ष में हैं और दूसरी विचार धारा उसे विनष्ट करने तथा एक नवीन आर्थिक आधार पर समाज का निर्माण करने के पक्ष में है। मैं अनुच्छेद 31 की ओर सभा का ध्यान आकृष्ट करता हूं, जिसमें इन परस्पर-विरोधी विचार-धाराओं के बीच के मार्ग को अपनाया गया है। हम कृषि के हितों के अतिरिक्त अन्य हितों का उल्लेख नहीं कर सके हैं। जमींदारी के तथा सामन्तशाही के हितों का भी बहुत साधारण ढंग से उल्लेख किया गया है। किसी देश का राजनैतिक विकास उसके आर्थिक ढांचे के आधार पर ही होता है। एक ओर हम देश के जनसाधारण को वयस्क मताधिकार प्रदान करने जा रहे हैं, अर्थात् हम उन लोगों को राजनैतिक शक्ति प्रदान करने जा रहे हैं, जिन्हें दिन में दो वक्त पेट भर खाने को नहीं मिलता, जो भिखारी हैं और जो साल में नौ महीने बेकार रहते

[श्री जदुवंश सहाय]

हैं, और दूसरी ओर हम समाज के वर्तमान आर्थिक ढांचे को सुस्थिर बनाना चाहते हैं। आप वर्तमान स्थिति को बनाये रखना चाहते हैं। इस समस्या को आप को हल करना होगा। यदि हम लोग, जो उस महान संगठन के सदस्य हैं जिसने राजनैतिक स्वातंत्र्य प्राप्त किया है और जिसने बहुत हद तक इस देश के संविधान का निर्माण किया है इस प्रश्न की उपेक्षा करेंगे तो यह प्रश्न हमारी उपेक्षा नहीं करने जा रहा है। यदि हम इसे हल नहीं करेंगे तो अन्य लोग इसे हल करेंगे। इसे वे लोग हल करेंगे जो इस देश में विदेशी नारे लगायेंगे तथा अन्य देश के प्रभाव को स्थापित करेंगे। क्या हम इस प्रश्न को इन लोगों के हल करने के लिये छोड़ दें? इस चुनौती का उत्तर हम इस संविधान में नहीं दे सके हैं।

किन्तु मैं इसी प्रश्न को बार-बार नहीं दुहराऊंगा क्योंकि यदि हम संविधान को ईमानदारी से, उत्साह से तथा सत्यनिष्ठा से व्यवहार में लाना चाहते हैं तो प्रस्तावना में पर्याप्त प्रत्याभूति दी गई है। किसानों तथा मजदूरों के लिये और जो लोग पददलित हैं उनके लिये यह पर्याप्त प्रत्याभूति है। यदि हम इसे ठीक भावना से व्यवहार में नहीं लायेंगे तो आर्थिक न्याय का क्या अर्थ रह जायेगा? उस व्यक्ति के लिये आर्थिक न्याय का क्या अर्थ है जिसे पेट भर खाना न मिलता हो और जिसकी जेब में एक आना भी न हो? आप कहेंगे कि उसे संसद की सदस्यता के लिये खड़ा होने का अधिकार है। क्या यह आर्थिक न्याय है? यह एक मखौल है। आप कहेंगे कि आप के स्कूलों और कॉलेजों में किसानों और मजदूरों के लड़के स्वतंत्रता से भर्ती हो सकेंगे। क्या इसका अर्थ उनको शिक्षा देना है? विभिन्न विश्वविद्यालयों के विज्ञान के कालेजों में किसान और मजदूरों के कितने लड़के पढ़ रहे हैं? बहुत कम। इसलिये यह एक मखौल ही है। इस युग में जब हमें वास्तविक प्रश्नों को हल करना है, हमें जीवन की वास्तविकता से मुह न मोड़ना चाहिये। समय बदल रहा है और हमें समयोचित कार्य करना है। कांग्रेस का तथा राष्ट्र पिता का सबसे बड़ा गुण यह रहा है कि वे समयोचित कार्य करते थे और समय की आवश्यकताओं को पहचानने का प्रयास करते थे। जब वे देखते थे कि हम अमुक अमुक बातों को करने के लिये समर्थ हो गये हैं तो वे हमें उपचार बताते थे। किन्तु आज हम क्या कर रहे हैं? अवमूल्यन तथा आयात और निर्यात के प्रश्नों के कारण हमें आर्थिक जिन का तथा "अधिक उत्पादन करो या विनष्ट हो जाओ" के प्रश्न का सामना करना पड़ रहा है। हम उद्योगपतियों से अपील कर रहे हैं कि वे चीनी के विवादग्रस्त प्रश्न को हल करने में उदारता तथा साधुता का परिचय दें।

यदि हम इस संविधान में कुछ ऐसे उपबन्ध रखते जिन से इस देश में एक वर्गहीन समाज की स्थापना की आशा की जा सकती तो मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। यह कोई समाजवादी व्यवस्था नहीं है और न मार्क्स के दर्शन ने ही इसे जन्म दिया है। इन शब्दों को महात्मा गांधी ने स्वयं कहा था। यदि वे आज जीवित होते तो वे इस सिद्धान्त के अनुरूप आचरण करते और इस प्रकार के समाज को अस्तित्व में ले आते। श्रीमान, कुछ लोगों को यह वर्गहीन समाज का विचार अग्राह्य है। वे कहते हैं कि इसकी घोषणा तो समाजवादी और साम्यवादी किया

करते हैं और इससे हमें किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये। जी नहीं, यह आवाज उन लोगों की है जिनके इस देश में संपृक्त स्वार्थ हैं। यह आवाज उन लोगों की है जो इस देश के करोड़ों लोगों को दबाना चाहते हैं। महात्मा गांधी भारत के ही नहीं बल्कि संसार भर के पददलितों के सबसे बड़े प्रेमी थे और उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि भारत एक वर्गहीन समाज चाहता है। किन्तु आज हम क्या कर रहे हैं? वर्गहीन समाज तो दूर रहा मूलाधिकारों में अथवा निदेशक तत्वों में सम्पत्ति के राष्ट्रीयकरण तक का उल्लेख नहीं है। इस देश के करोड़ों लोगों के लिये कौन सी आशाप्रद बात रखी गई हैं? आशाप्रद बात केवल यह है कि इस देश के नेता समझदार हैं और उन पर लोकमत का प्रभाव पड़ता है। मुझे पूरी आशा है कि यदि हम प्रयास करेंगे तो हम इस संविधान के अधीन इन सब बातों को कर सकेंगे और एक वर्गहीन समाज को अस्तित्व में ला सकेंगे और इस देश के करोड़ों निवासियों के घरों में आशा का संचार कर सकेंगे। यदि हम ईमानदारी से कार्य करें, यदि हम यह समझ कर कार्य करें कि आर्थिक लोकतंत्र के बिना लोकतंत्र का कोई महत्व नहीं है तो हम इस संविधान द्वारा यह सब कर सकते हैं। कुछ लोगों के लोकतंत्र का विभिन्न प्रान्तों से आये हुए तथा दिल्ली के मकानों में रहने वाले कुछ लोगों के लोकतंत्र का कोई अर्थ नहीं है। वास्तविक लोकतंत्र का अर्थ यह है कि हम यह समझें कि हम लोगों के सेवक हैं तथा लोगों के वास्तविक प्रतिनिधि हैं। मैं यह कहूंगा कि भारत के इतिहास में यह सब से बड़ा प्रयोग है क्योंकि, चाहे शास्त्रों और पुराणों से हम कितने ही उद्धरण पढ़कर क्यों न सुनायें, इस प्रकार का लोकतंत्र पहले अस्तित्व में नहीं था। यदि यह महा-प्रयोग विफल हुआ तो इस संविधान के कारण विफल नहीं होगा बल्कि इस कारण विफल होगा कि हममें से वे लोग जिन्हें करोड़ों मील दूर रहने वाले लोगों का भाग्यवश प्रतिनिधित्व करना पड़ रहा है। वास्तव में उनका प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं।

इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं फिर कहूंगा कि किसी संविधान का सफल होना केवल उन लोगों पर निर्भर नहीं करता जो उसे व्यवहार में लाते हैं बल्कि उन लोगों पर भी निर्भर करता है जिनके लिये वह व्यवहार में लाया जाता है। हमारे देशवासियों का चरित्र इसी संविधान की कसौटी पर कसा जायेगा। मुझे आशा है कि हम कोई भी कार्य ऐसा नहीं करेंगे जिससे हमें लज्जा से अपना सिर झुकाना पड़े।

नागरिक स्वतंत्राओं तथा इस प्रकार के अन्य विषयों के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा गया है। इन विषयों में मेरी दिलचस्पी नहीं है। नागरिक स्वतंत्रता के विचार मात्र का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यदि देश का ही अस्तित्व नहीं रहेगा तो नागरिक स्वतंत्रता कहां रहेगी। आज हम देखते हैं कि मुट्ठी भर लोग जनसाधारण को पथभ्रष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं। हम उन्हें साम्यवादी कहते हैं अथवा अन्य नाम देते हैं। किन्तु वह इस देश के बहुत से लोगों को पथभ्रष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं। इस समय नागरिक स्वतंत्राओं के लिये संघर्ष करने का अर्थ यह है कि हम राज्य के अस्तित्व को ही संकट में डाल देंगे। इस समय हमें कई समस्याओं को हल करना पड़ रहा है जिनमें से कुछ पाकिस्तान के कारण उठ खड़ी हुई हैं और कुछ पश्चिमी देशों के कारण। इस समय हमारे देश को उन नागरिक स्वतंत्रताओं की आवश्यकता नहीं है जिन की न्याय-वेत्ता कल्पना करते हैं अथवा जिनका वर्णन हमने कॉलेज की किताबों में पढ़ा था। यदि शिक्षित लोग

[श्री जदुवंश सहाय]

अच्छी से अच्छी नागरिक स्वतंत्रताओं को प्राप्त करना चाहेंगे तो चाहे संविधान द्वारा कितने ही परिसीमन क्यों न आरोपित किये जायें वे उन्हें प्राप्त करेंगे। देश-द्रोह विषयक विधि अस्तित्व में थी किन्तु अवसर मिलने पर उसमें परिवर्तन कर दिया गया। पच्चीस वर्ष पूर्व यदि थोड़े से शब्द भी कहे जाते थे तो देशद्रोह विषयक विधि के अधीन कार्यवाही की जाती थी। किन्तु 1942 में "भारत छोड़ो" के समान नारे तथा अन्य आलोचनायें देशद्रोह की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आईं। इसलिये ये बातें किसी पुस्तक की प्राणशून्य शब्दावली पर निर्भर नहीं करतीं बल्कि किसी राष्ट्र के विकास पर, उसकी विकास-क्षमता पर तथा इन सब रोगों को दूर करने की शक्ति पर निर्भर करती हैं। इसलिये जिन नागरिक स्वतंत्रताओं की इतनी अधिक चर्चा की गई है उनके अपहरण का मुझे अधिक भय नहीं है।

मुझे केवल एक बात और कहनी है और वह प्रान्तों के सम्बन्ध में है। यह ठीक है कि सारी राजनैतिक शक्ति केन्द्र को ही प्राप्त हो किन्तु बिहार, मध्य प्रान्त, आसाम और उड़ीसा जैसे प्रान्तों से जो कृषि के सम्बन्ध में पिछड़े हुए हैं और जहां साम्यवाद किसी समय भी पनप सकता है मैं यह कहूंगा और श्रीमान, आप मुझे यह कहने के लिये क्षमा करें कि—विक्रय कर से उन्हें जो आय होती थी उसका बहुत बड़ा अंश लूट-खसोट कर ले लिया गया है। हम यह देखते हैं कि समाज के वर्तमान आर्थिक ढांचे को बनाये रखने के लिये तथा उसे पवित्र ठहराने के लिये व्यापार और वाणिज्य के स्वातंत्र्य तथा अन्य बातों की प्रत्याभूति दी गई है। विक्रय कर के सम्बन्ध में हम देखते हैं कि प्रान्तों को संग्रह के अपने भाग से वंचित किया जा रहा है। इससे केन्द्र को कोई लाभ नहीं हुआ है बल्कि मध्य-वर्ग के उन लोगों को हुआ है जो चीजों को एक स्थान पर खरीदते हैं और दूसरे स्थान पर बेचते हैं। बिहार का ही उदाहरण लीजिये विक्रय-कर के सम्बन्ध में जो संशोधन किया गया है उससे हमें दो करोड़ रुपये से अधिक धनराशि की हानि होगी। आप एक कल्याणकारी राज्य को न कि पुलिस-शासित राज्य को स्थापित करना चाहते हैं क्योंकि आज कल पुलिस शासित राज्य टिक नहीं सकते हैं। यदि आप एक कल्याणकारी राज्य को स्थापित करना चाहते हैं, यदि आप मजदूरों और किसानों तथा पद-दलितों के बच्चों के लिये स्कूल और कॉलेज खोलना चाहते हैं तथा उनकी शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहते हैं और उनके लिये अस्पतालों और दवाओं का प्रबन्ध करना चाहते हैं तो इसके लिये धन कहां से आयेगा। इसके लिये आप प्रान्तों से ही धन मांगेंगे। किन्तु उनके आयव्ययकों की स्थिति डांवांडोल होगी क्योंकि प्रान्तों के आयव्ययक दृढ़ निश्चय से नहीं बनाये जाते। प्रान्तों के मार्ग में इन आर्थिक कठिनाइयों को नहीं रखना चाहिये था। उन्हें आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिये और धन-संग्रह की भी स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिये। कम से कम विक्रय-कर से धन-संग्रह की स्वतंत्रता तो प्राप्त होनी ही चाहिये जिससे वे कल्याणकारी राज्यों के रूप में अपने कार्यों का निर्वहन कर सकें।

श्रीमान, इन शब्दों के साथ मैं इस सभा से फिर सिफारिश करता हूं कि यह संविधान स्वीकार कर लिया जाये।

***श्री गोपाल नारायण** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, तीन वर्ष तक, जब इस संविधान का निर्माण हो रहा था, मैं इस सभा के कार्य को चुपचाप देखता रहा और केवल दो बार मैंने अपना मौन भंग किया। किन्तु इस अन्तिम अवसर पर, अर्थात् तृतीय पठन के अवसर पर मैं साहस करके अपने विचारों को स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करना चाहता हूं।

आरम्भ में मैं मसौदा समिति के सभापति डॉ. अम्बेडकर को तथा उसके सदस्यों को एक ऐसे वृहदाकार संविधान को बनाने के लिये बधाई देता हूं जिसमें वास्तव में कुछ भी नहीं छोड़ा गया है। उसमें मूल्य-नियंत्रण तक को स्थान दिया गया है। मैं यह कहूंगा यदि उनके पास समय होता तो वे इस संविधान में एक प्रकार की जीवन-चर्या का भी वर्णन कर देते। श्रीमान, डॉ. अम्बेडकर के सम्बन्ध में मैं दो शब्द और कहना चाहता हूं। वे स्पष्ट अभिव्यक्ति की तो मूर्ति ही हैं। उन्होंने बहुत ख्याति प्राप्त की है।

कुछ महीने पूर्व माननीय श्री सम्पूर्णानन्द एक सम्मेलन में भाग लेने के लिये यहां आये थे और उन्होंने इस संविधान के सम्बन्ध में मेरी सम्मति पूछी थी। मैंने उनसे स्पष्ट शब्दों में कहा था कि यह बहुत कुछ 1935 के भारत-शासन-अधिनियम पर आधृत है और इसमें कुछ बातें अमरीका, कनाडा आदि के संविधानों में से लेकर जोड़ दी गई हैं। इससे संकेत लेकर उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय के स्नातकों को दीक्षांत भाषण देते हुए कहा कि यह संविधान "कतरनों को जोड़कर" बनाया गया है। मैं उनसे पूर्णतया सहमत हूं। किन्तु मैं अपने मित्र सेठ दामोदर स्वरूप से सहमत नहीं हूं, जिन्होंने इस संविधान को जागीरदारों तथा पूंजीपतियों का संविधान कहा है। इस संविधान के सम्बन्ध में मेरी यह सम्मति है कि इस संविधान से हमारे आदर्श की पूर्ति नहीं हुई है। यह उसके निकट की चीज़ नहीं है जो कांग्रेसजन पिछले तीस वर्षों तक स्वतंत्रता के लिये संग्राम करते रहे हैं.....

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अच्छा यह होता कि आप हमें समय पर चेतावनी दे दिये होते।

***श्री गोपाल नारायणः** जब श्री जसपत राय कपूर अपना भाषण दे रहे थे तो मैं उसे चुपचाप सुनता रहा। मैंने उसमें विघ्न नहीं डाला। मुझे आशा है कि वे भी मेरे भाषण में विघ्न नहीं डालेंगे। श्री कपूर की अपेक्षा मैं कांग्रेस से अधिक परिचित हूं। मैं यह कह रहा था कि संविधान से हमारे आदर्श की पूर्ति नहीं हुई है। जिन कांग्रेस जनों ने तीस वर्ष तक स्वतंत्रता के लिये संग्राम किया है उनके मस्तिष्क में संविधान का बिल्कुल भिन्न चित्र था। वे इससे बिल्कुल भिन्न संविधान की कल्पना करते थे। इससे उनकी आशायें पूरी नहीं हुई हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि इसमें कुछ अच्छी बातें भी हैं। एक वृहदाकार पुस्तक में कुछ अच्छी बातें अवश्य होंगी। मैं उनकी ओर ध्यान दिलाता हूं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि पृथक् निर्वाचक-मंडलों को समाप्त कर दिया गया है। वयस्क मताधिकार और मादक द्रव्य प्रतिषेध के सम्बन्ध में भी उपबन्ध रखे गये हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ये बहुत अच्छी बातें हैं। इसके अतिरिक्त पिछड़े हुए वर्गों के लिये कुछ सुविधायें

[श्री गोपाल नारायण]

भी रखी गई हैं। उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाई गई है। इन अच्छी बातों को रखने के लिये मैं मसौदा समिति के सदस्यों को बधाई देता हूं। यह संविधान की बहुत उत्कृष्ट बातें हैं। किन्तु उसके कुछ दोष भी हैं।

अनुच्छेद 21 और 31 उसके दोषों के उदाहरण हैं। अनुच्छेद 21, जिसका मनुष्य के जीवन से सम्बन्ध है, न्याय्य नहीं है। किन्तु निजी सम्पत्ति के अधिकार को न्याय्य बनाया गया है। ये संविधान के बहुत बड़े दोष हैं।

मैं एक अन्य बात पर भी जोर देना चाहता हूं। अत्यधिक केन्द्रीकरण किया गया है। स्थानीय विधान मंडलों की ऐसी दशा कर दी गई है कि उन्होंने अब स्थानीय निकायों, नगर पालिकाओं, स्थानीय मंडलियों आदि का रूप धारण कर लिया है। इसका परिणाम यह होगा कि प्रान्तीय विधान मंडल स्थानीय मंडलियों तथा नगरपालिकाओं की शक्तियों को समाप्त कर देंगे। यद्यपि पंचायतों को कुछ शक्तियां प्रदान की गई हैं। किन्तु मैं समझता हूं कि उनका कोई भी कार्य क्षेत्र नहीं रह जायेगा। मेरे विचार से यह ठीक नहीं है।

मैं एक और बात पर भी जोर देना चाहता हूं। भविष्य में किसी समय इस विभाजित भारत के एक होने के सम्बन्ध में कोई उपबंध नहीं है। हिन्दी को राजकीय भाषा के रूप में स्वीकार करने से इस प्रकार की कोई संभावना नहीं रह गई है। इसके कारण पश्चिमी पाकिस्तान भी हमारे देश में किसी प्रकार समाविष्ट नहीं हो सकेगा। यह सब होते हुए भी हम आशा करते हैं कि जो हिन्दी अपनाई जायेगी वह इस ढंग की होगी कि आगे चलकर किसी समय ये दो देश एक हो सकेंगे। अन्यथा इस संविधान में इन दो देशों के एक होने के सम्बन्ध में कोई उपबंध नहीं है। यह इस संविधान का एक बहुत बड़ा दोष है।

अन्त में श्रीमान, मैं आपको इस सभा के कार्य का संचालन इतनी योग्यता से करने के लिये बधाई देता हूं। आपने सभी का ध्यान रखा और किसी सदस्य को अपने विरुद्ध एक शब्द भी कहने का अवसर नहीं दिया। मैं समाप्त करता हूं।

***श्री अजित प्रसाद जैन** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, प्रत्येक राष्ट्र अपने जीवन काल में एक ही बार किसी संविधान को अंगीकार करने का निर्णय करता है। हम लोगों को अपने भाग्य की सराहना करनी चाहिये कि हमें इस संविधान के निर्माण कार्य में भाग लेने का अवसर मिला है। भारत के इतिहास में महान प्रतिष्ठा के काल रहे हैं। बड़े-बड़े साम्राज्य स्थापित हुए हैं तथा उनका प्रसार हुआ है और उदार हृदय तथा सज्जन सम्राटों ने शासन किया है किन्तु कभी भी लोगों ने, लोगों के लिये कोई संविधान नहीं बनाया अन्य बातों की चर्चा करने के पूर्व मैं यह आवश्यक समझता हूं कि मैं डॉ. अम्बेडकर को तथा मसौदा-समिति को धन्यवाद दूं, जो लगातार कई दिनों तक कठिन परिश्रम करते रहे हैं।

लगभग तीन वर्ष पूर्व, आज की स्थिति से बिल्कुल भिन्न स्थिति में इस संविधान सभा ने अपना कार्य आरम्भ किया था। भारत उस समय अविभक्त था किन्तु मुस्लिम

लीग ने, जो कांग्रेस दल का प्रतिद्वन्दी दल था, संविधान के निर्माण कार्य में भाग लेने से इन्कार कर दिया था उस समय प्रत्येक व्यक्ति यही प्रश्न पूछता था "सभी मुसलमानों के अनुपस्थित रहने पर क्या हम संविधान का निर्माण कर सकेंगे?" इसके पश्चात् खिन्न मन से हमने देश का विभाजन स्वीकार किया। देश के विभक्त हो जाने से हममें से किसी को भी प्रसन्नता नहीं है किन्तु यह स्वीकार करना होगा कि इससे हमारा संविधान निर्माण का कार्य आसानी से सम्पन्न हो सका है। वास्तव में अल्पसंख्यकों के प्रश्न के कारण हमें बहुत काल तक सरदर्द रहा है और उसके कारण कई राष्ट्रीय प्रश्नों को हल करने के लिये हम जो प्रयास करते रहे हैं वह विफल रहा है। किन्तु अब उस प्रश्न का कुछ भी महत्व नहीं रह गया है। हो सकता है कि हम अभी तक एक सुगठित तथा सामंजस्यपूर्ण समाज स्थापित नहीं कर सके हैं। किन्तु पुरानी कटुता बहुत कुछ मिट चुकी है और इस समय हम सच्ची राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के पथ पर अग्रसर हैं।

जिस संविधान का हमने निर्माण किया है वह राजनैतिक आर्थिक दृष्टि से क्रान्तिकारी संविधान नहीं कहा जा सकता है। उसमें 1935 के भारत शासन अधिनियम की व्यवस्था तथा पदावलियों को तो स्वीकार किया ही गया है किन्तु साथ ही पुरानी विधियों और संस्थाओं को भी स्वीकार किया गया है। उन विधियों के अतिरिक्त, जो अध्याय 3 में वर्णित मूलाधिकारों का खंडन करती हैं वे सब विधियां जो इस संविधान के प्रारम्भ के ठीक पूर्व प्रवर्त्तन में थीं, नवीन संविधान के अधीन भी प्रवर्तन में रहेंगी। संघीय न्यायालय उच्चतम-न्यायालय के नवीन नाम से कार्य करेगा और उसका कुछ अतिरिक्त क्षेत्राधिकार भी हो जायेगा, अर्थात उसे वह क्षेत्राधिकार भी प्राप्त हो जायेगा जो अभी तक प्रिवी कौंसिल को प्राप्त रहा है। संघीय न्यायालय के न्यायाधीश उच्चतम-न्यायालय के न्यायाधीश हो जायेंगे और प्रान्तीय उच्च-न्यायालय तथा उनके न्यायाधीश तत्स्थानी राज्यों के उच्च-न्यायालय तथा उच्च-न्यायालय के न्यायाधीश हो जायेंगे। महाधिवक्ता तथा नियंत्रक-महालेखापरीक्षक वही कार्य करेंगे जो वह पहले करते थे और जो लोग अभी तक इन कार्यों को करते थे वही इस संविधान के अधीन भी इन कार्यों को करते रहेंगे। संघ के तथा राज्यों के लोक-सेवा आयोगों का गठन पहले के समान ही होगा और वही कार्यकर्ता उनमें काम करते रहेंगे। भारत-शासन अधिनियम के अधीन भारत-मंत्री ने, अथवा सपरिषद् भारत-मंत्री ने, जिन लोगों को सेवाओं में, नियुक्त किया है उनमें से प्रत्येक को "भारत सरकार या राज्य की सरकार से, जिसकी सेवा वह समय समय पर करता आया हो, पारिश्रमिक छुट्टी और निवृत्ति-वेतन के बारे में उन्हीं सेवा-शर्तों का, तथा अनुशासनीय विषयों के बारे में उन्हीं अधिकारों का अथवा उनके तुल्य ऐसे अधिकारों का, जैसे कि परिवर्तित, परिस्थितियों में सम्भव हों, हक होगा, जिनका कि उस व्यक्ति को ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले हक था।" इससे यह स्पष्ट हो जायेगा कि यह नहीं किया गया है कि नये ढांचे में पुरानी बातें रखी गई हैं बल्कि यह किया गया है कि पुराने ढांचे में पुरानी ही बातें रखी गई हैं। नई व्यवस्था के अधीन पहले के समान ही विधियां बनेंगी और जो प्रशासन-संगठन होगा वह भी पहले के समान ही होगा।

आर्थिक व्यवस्था के सम्बन्ध में मूलाधिकार-विषयक अनुच्छेद 31 को देखना चाहिये। उसमें कहा गया है, 'कोई व्यक्ति विधि के प्राधिकार के बिना अपनी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जायेगा और कोई स्थावर या जंगम सम्पत्ति... ऐसी

[श्री अजित प्रसाद जैन]

विधि के अधीन जो ऐसा कब्जा या अर्जन करने का प्राधिकार देती है सार्वजनिक प्रयोजन के लिये कब्जाकृत या अर्जित तब तक नहीं की जायेगी जब तक कि वह विधि कब्जाकृत या अर्जित सम्पत्ति के लिये प्रतिकर का उपबन्ध न करती हो।" यह अनुच्छेद बहुत कुछ भारत-शासन अधिनियम की धारा 299 के समान ही है। थोड़ा बहुत हेर फेर अवश्य किया गया है और कुछ प्रान्तों के लिये जमींदारी के अधिकारों के सम्बन्ध में अपवाद किया गया है। उसमें पूंजीमूलक समाज का तथा धन और आय के सम्बन्ध में उसकी विषमताओं का पोषण किया गया है। सम्भव है कि हमारे वर्तमान आर्थिक संकट के रहते हुए इससे अच्छी व्यवस्था नहीं की जा सकती थी किन्तु यह व्यवस्था अधिक दिन तक नहीं टिक सकती है। जैसा कि हाल में माननीय श्री गाडगिल ने कहा था, हमें अपने समाज के गठन में मूलभूत परिवर्तन करना होगा। आज कल जो उद्योग धंधे निजी रूप से चलाये जाते हैं उनमें से बहुतों का हमें राष्ट्रीयकरण करना होगा। बिना इसके न तो हम अपनी आर्थिक समस्याओं को हल कर सकेंगे और न अपने राष्ट्र का ही हित साधन कर सकेंगे।

श्रीमान, अंग्रेज़ हमें बहुत ही विषम स्थिति में डाल गये। 15 अगस्त 1947 को पांच सौ से अधिक छोटे और बड़े भारतीय नरेश एकाएक सम्राट हो गये। तिरुवांकुर और भूपाल भयानक रुख का परिचय दे रहे थे। लोगों की इच्छा न होते हुए भी जूनागढ़ ने पाकिस्तान में समाविष्ट हो जाने का निश्चय कर लिया था और हैदराबाद हमारी ओर ऐसा रुख अपना रहा था जो शत्रुता का रुख कहा जा सकता है। इस स्थिति में हमें फूट की उसी विभिषिका का सामना करना पड़ रहा था जो हमारे इतिहास की तथा एशिया के बहुत से देशों के इतिहास की विशेषता रही है। यह कोई छोटी बात नहीं है कि ढाई वर्ष में ही हमने कम से कम भौगोलिक एकता तो स्थापित कर दी है और देशी राज्यों को राजनैतिक एककों के रूप में नहीं रहने दिया है। प्रथम अनुसूची के भाग (ख) पर दृष्टिपात करने से ज्ञात हो जायेगा कि पहले भारत का जो राज्य क्षेत्र "भारतीय भारत" कहा जाता था और 500 से अधिक राज्यों में बंटा हुआ था वह अब केवल नौ राज्यों में बंटा हुआ है। मेरे विचार से अध्याय 7 संविधान का सबसे अधिक उज्जवल अंग है क्योंकि उसमें पहले के नरेशों के भारत के देशी राज्यों को भाग (क) के राज्यों, अर्थात् प्रान्तों के स्तर पर रखा गया है। किन्तु हमें यह न भूलना चाहिये कि अभी यह केवल कागज में ही लिखा हुआ है।

यद्यपि उन राज्यों में जो पहले प्रान्त को आधुनिक लोकतंत्र की विशेषतायें अर्थात् लोकमत, राजनैतिक दल, निर्वाचक-मंडल प्रशासन तंत्र आदि अस्तित्व में हैं किन्तु उन राज्यों में, जो पहले देशी राज्य कहे जाते थे इनका सर्वथा अभाव है। उन्हें अभी बहुत उन्नति करनी है और वास्तव में हमारे आदर्शों की पूर्ति इससे आंकी जायेगी कि हम प्रथम अनुसूची के भाग (क) और भाग (ख) के राज्यों को किस सीमा तक एक समान बना सके हैं। हम आशा करते हैं कि सरदार वल्लभभाई पटेल की बुद्धिमत्तापूर्ण राजनीतिज्ञता के फलस्वरूप हम शीघ्र ही उन सब बातों को व्यवहार में भी ला सकेंगे जिन्हें हमने सैद्धान्तिक रूप में प्राप्त किया है।

मैं यह कह चुका हूं कि नवीन संविधान में तथा वर्तमान संविधान में अधिक अन्तर नहीं है। किन्तु कुछ विषयों के सम्बन्ध में उसके द्वारा एक क्रान्ति के

युग का प्रवर्तन हुआ है। भविष्य में इक्कीस वर्ष की आयु प्राप्त सभी वयस्कों को समान रूप से पूर्ण मताधिकार प्राप्त होगा। हमारी राजनैतिक संस्थाओं अर्थात संसद और राज्यों के विधान-मंडलों का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह एक क्रान्तिकारी परिवर्तन है। हमारे देश के निर्वाचकों की संख्या संसार के सभी देशों के निर्वाचकों की संख्या और रूस और अमरीका के निर्वाचकों की संख्या से भी बड़ी होगी। इस प्रकार के प्रयोग को करने में खतरा अवश्य है किन्तु हम आशा करते हैं कि भारत में ऊंची योग्यता रखने वाले नेताओं के होते हुए राज्य की नौका सभी खतरों में बच कर किनारे आ लगेगी।

भाग 2 में नागरिकता की परिभाषा की गई है। इसमें कहा गया है कि वे सब लोग जो भारत में जन्मे हों, अथवा जो वैध रूप में भारत के निवासी हों अथवा जिन्होंने पाकिस्तान से प्रवजन किया हो और अब भारत के निवासी हो गये हों, उन्हें समान रूप से नागरिकता के अधिकार प्राप्त होंगे और धर्म, वंश, जाति अथवा वर्ग के आधार पर विभेद नहीं किया जायेगा। नागरिकता की आधार-शिला पर ही हमारे संविधान की नीव डाली गई है। संविधान में वर्णित सभी अधिकारों की प्रत्याभूति सभी नागरिकों को दी गई है। भारत के प्रत्येक नागरिक को वाक-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का, शान्ति पूर्वक और निरायुध सम्मेलन का, सन्था या संघ बनाने का, भारत राज्य क्षेत्र के किसी भाग में अबाध संचरण का तथा बस जाने का और कोई वृत्ति या व्यापार या कारबार करने का अधिकार होगा। यह स्वीकार करना होगा कि स्वतंत्रता के ये अधिकार आगे कुछ खण्डों द्वारा निर्बन्धित किये गये हैं। उदाहरणार्थ शान्तिपूर्वक और निरायुध सम्मेलन का अधिकार अपराध-प्रक्रियासंहिता की निन्दनीय धारा 144 द्वारा निर्बन्धित किया गया है। यह एक दोष कहा जा सकता है किन्तु उस समय तक दोष भी न कहा जा सकता है जब तक हम वास्तविक स्वातंत्र्य को व्यवहार में लाते हुए आत्मसंयम के गुणों को न समझने लगें। किन्तु हमारी सफलता का परिचय इन निर्बन्धनों को प्रायः प्रयोग करने से नहीं बल्कि इन धाराओं को बहुत कम प्रयोग करने से ही मिलेगा।

प्रत्येक व्यक्ति को विधि के समक्ष समता की प्रत्याभूति दी गई है। किसी व्यक्ति को अपने प्राण तथा अपनी सम्पत्ति से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को छोड़कर अन्य प्रकार वंचित न किया जायेगा। एक उपबंध निवारक-निरोध के सम्बन्ध में भी हैं। यह एक दोषपूर्ण उपबंध है किन्तु सम्भवतः वर्तमान स्थिति को देखते हुए इसे स्वीकार करना आवश्यक है। मैं यह फिर कहूंगा कि हमारी सफलता का परिचय निवारक निरोध विषयक इस धारा के बहुत कम प्रयोग से ही मिलेगा।

हमारे संविधान में यह उपबंध रखा गया है कि लिंग के आधार पर किसी नागरिक के प्रति विभेद नहीं बरता जायेगा। राज्याधीन पदों तथा नौकरियों को प्राप्त करने के लिये स्त्रियों को वही अधिकार प्रदान किये गये हैं जो पुरुषों को प्राप्त हैं और इनके विषय में किसी नागरिक के लिये धर्म, जाति, लिंग अथवा मूलवंश के आधार पर अपात्रता नहीं होगी। यह राज्य की नीति का एक निदेशक तत्व है कि स्त्री और पुरुषों को समान कार्य के लिये समान वेतन दिया जाये। हमारे इतिहास में ऐसी महिलाओं के उदाहरण मिलते हैं जिन्होंने पुरुषों से भी अधिक प्रतिष्ठा तथा ख्याति प्राप्त की है किन्तु जिस अर्थ में इस संविधान के अधीन

[श्री अजित प्रसाद जैन]

पुरुषों और स्त्रियों की समानता को स्वीकार किया गया है उस अर्थ में उसे कभी भी स्वीकार नहीं किया गया था। जिस अस्पृश्यता के कारण इस देश का सहस्त्रों वर्षों का इतिहास कलंकित रहा है उसका अन्त कर दिया गया है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया गया है। उसे दंडनीय अपराध घोषित किया गया है। प्रत्येक व्यक्ति को दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश का तथा तालाबों, स्नानघाटों तथा सार्वजनिक समागम स्थानों के उपभोग का समान अधिकार होगा, राष्ट्रपिता के प्रेरणापूर्ण नेतृत्व में हमें अस्पृश्यता का अंत करने में बहुत कुछ सफलता प्राप्त हो चुकी है। जो कुछ कार्य शेष है वह मूलाधिकार-विषयक इन उपबंधों से शीघ्र ही सम्पन्न हो जायेगा। किन्तु अस्पृश्यता के मूल में आर्थिक विषमता ही है। उन लोगों को जो अन्य लोगों के उत्पीड़न के कारण सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में पिछड़ गये हैं अन्य लोगों के स्तर पर आने का अवसर देने के लिये अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिमजातियों तथा अन्य पिछड़े हुए वर्गों के लिये संसद तथा राज्यों के विधान मंडलों में और सेवाओं में उस समय तक के लिये स्थान रक्षित किये गये हैं जब तक कि वे अन्य लोगों के स्तर पर न आ जायें। पहली बार दस वर्ष तक इस प्रकार का रक्षण रखा गया है।

अल्प संख्यकों के पेचीदे प्रश्न को भी हम बड़ी कठिनाई से हल कर पाये हैं। भविष्य में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिमजातियों और पिछड़े हुए वर्गों के अतिरिक्त विधान-मंडलों में अथवा सेवाओं में अल्पसंख्यकों के लिये स्थान रक्षित नहीं किये जायेंगे। यह रिआयत धर्म अथवा जाति के आधार पर नहीं की गई है बल्कि इन लोगों के पिछड़े हुए होने के कारण की गई है। अल्पसंख्यकों को धर्माचरण की तथा अपनी संस्कृति, भाषा और लिपि के विकास की स्वतंत्रता प्रदान की गई है किन्तु राजनैतिक अधिकारों के सम्बन्ध में उनके पक्ष में, अथवा उनके निरोध में कोई विभेद नहीं किया है। इसलिये अल्पसंख्यकों को अपने भविष्य के सम्बन्ध में कुछ भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। इसी अर्थ में हमने ऐसे राज्य की स्थापना की है जिसे लोग धर्म निरपेक्ष राज्य कहते हैं।

संविधान में जिन मूलाधिकारों की प्रत्याभूति दी गई है उनमें से अधिकांश न्याय्य अधिकार हैं अर्थात यदि कोई व्यक्ति यह समझता है कि उसके साथ अन्याय हुआ है तो वह न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो सकता है। किन्तु न्यायालय के समक्ष उपस्थित होना हमेशा आसान नहीं होता। मैं कह नहीं सकता है कि मैग्ना कार्टा में उल्लिखित अधिकारों और विशेषाधिकारों को सुरिक्षत रखने के लिये अंग्रेज़ों ने जिस भावना का परिचय दिया है वही भावना हमारे देशवासी भी रखते हैं, या नहीं। सतत सचेत रहना ही स्वातंत्र्य का मूल्य है जिससे राष्ट्रों को तथा लोगों को चुकाना होता है। हमारे यहां तो राज्य की जिम्मेदारी और भी अधिक है। व्यवहार में उसे नागरिकों को वे अधिकार प्राप्त करने होंगे जो विधि द्वारा उन्हें प्रदान किये गये हैं।

इस संविधान के फलस्वरूप एक बहुत बड़ी बात यह हासिल हुई है कि भाषा के प्रश्न के सम्बन्ध में समझौता हो गया है। युगों से भारत एक बहु-भाषी देश रहा है और यहां 13 अथवा 14 मुख्य भाषायें और असंख्य बोलियां प्रचलित रही

हैं जिनमें से कुछ की अपनी लिपियां रही हैं और कुछ की लिपियां नहीं रही है। अंग्रेज़ों के राज में हमारी भाषाओं की उपेक्षा की गई और अंग्रेज़ी हम पर थोप दी गई। स्वतंत्र भारत में अंग्रेज़ी को कोई स्थान नहीं दिया जा सकता है। किन्तु एकाएक एक भाषा और लिपि के सम्बन्ध में भी समझौता कर लेना कोई सरल कार्य नहीं था। सौभाग्य से हमने एक बहुत ही सुन्दर समझौता किया है। देवनागरी लिपि में हिन्दी भारत की राज-भाषा होगी किन्तु पन्द्रह वर्ष तक अंग्रेज़ी को विशेष स्थान प्राप्त रहेगा और संविधान के प्रारम्भ के ठीक पूर्व वह संघ के जिन राजकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग की जाती थी उन प्रयोजनों के लिये वह राज-भाषा के रूप में प्रयोग की जाती रहेगी। किन्तु पन्द्रह वर्ष के पूर्व संघ के किन्हीं राजकीय प्रयोजनों के लिये अंग्रेज़ी के अतिरिक्त हिन्दी को भी प्रयोग करने की आज्ञा देने की शक्ति राष्ट्रपति को प्रदान की गई है। अनुच्छेद 31 में उपबन्धित है कि "हिन्दी भाषा की प्रसार-वृद्धि करना, उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, तथा उसकी आत्मीयता में हस्तक्षेप किये बिना हिन्दुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावलि को आत्मसात करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करना संघ का कर्तव्य होगा।" भाषा के सम्बन्ध में जो विधि रखी गई है वह एक प्रसरणशील विधि है। यह हमारे प्रयत्नों पर निर्भर है कि इन पन्द्रह वर्षों में कितने शीघ्र, अथवा कितने समय के पश्चात् हिन्दी अंग्रेज़ी का स्थान ले लेगी। किन्तु अब चूंकि हमने अंग्रेज़ी का स्थान हिन्दी को देने का निर्णय कर लिया है इसलिये जितने ही शीघ्र हम उसे कार्यान्वित करेंगे उतना ही अच्छा होगा। किन्तु हमें इस सम्बन्ध में सावधान रहना चाहिये कि वे लोग जो संस्कृत-जन्य भाषाओं को नहीं बोलते हैं यह न समझें कि उन पर अत्याचार किया जा रहा है अथवा उन्हें दबाया जा रहा है। यदि यह हुआ तो हिन्दी के हितसाधनों द्वारा ही उसकी हितहानि होगी। हिन्दी को सभी लोगों की, तथा सभी क्षेत्रों की सद्भावना के फलस्वरूप प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त हुआ है। हम आशा करते हैं कि हिन्दी शीघ्र ही भारतीय संघ में अभिव्यंजना का ही माध्यम न हो जायेगी बल्कि संघ और राज्यों के बीच में और राज्यों के बीच में लिखा पढ़ी का माध्यम भी हो जायेगी और साथ ही संस्कृति, तथा प्रशिक्षा का भी माध्यम हो जायेगी।

मैं आप की अनुमति से इस संविधान की रचना तथा इसके मसौदे के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। साधारणतया यह शिकायत की जाती है इस संविधान के निर्माण में हमने बहुत अधिक समय लगाया है और हमने इसे बहुत बोझल बना दिया है। मेरी भी यही सम्मत्ति है। कई ऐसे विषयों को, जिनके बारे में संसद विधि द्वारा उपबन्ध रख सकती थी अथवा जिनके बारे में नियम अथवा विनियम बनाये जा सकते थे, संविधान में स्थान दिया गया है। सम्भव है कि मसौदा समिति को अत्यधिक रक्षणों को रखने की चिन्ता रही हो किन्तु हमें यह न भूलना चाहिये कि जब तक भावी पीढ़ियां उनका आदर न करेंगी तब तक कागज़ में लिखे हुए ये रक्षण निरर्थक ही सिद्ध होंगे। मैंने अभी तक किसी भी स्वतंत्र देश के संविधान में सेवाओं के सम्बन्ध में किसी प्रकार के रक्षणों को नहीं देखा है। इसका अर्थ यह नहीं है कि सेवाओं में लगे हुए कर्मचारियों को जो प्रत्याभूतियां दी गई हैं, उन्हें समाप्त कर दिया जाये। किन्तु मैं यह अवश्य कहूंगा कि संविधान में इनके सम्बन्ध में उपबन्ध न रखने चाहिये थे। जो विषय कुछ कम महत्वपूर्ण थे उनके सम्बन्ध में विधि बनाने

[श्री अजित प्रसाद जैन]

का कार्य हम आने वाली पीढ़ियों के लिये छोड़ सकते थे। मुझे विश्वास है कि इस प्रकार की व्यवस्था से किसी को भी हानि नहीं उठानी पड़ती। किन्तु अब इस अवसर पर इस प्रश्न पर अधिक जोर देने से कोई लाभ नहीं होगा।

अन्त में मैं यह निवेदन करूंगा कि इस संविधान में कोई ऐसी बात नहीं है जो नवीन हो अथवा जो चित्ताकर्षक हो। इसमें जो उपबन्ध रखे गये हैं वे अन्य लोगों के अनुभव के आधार पर रखे गये हैं। मेरे मित्रों का चाहे जो भी विचार हो किन्तु मेरा यह मत है कि संविधान निर्माण के सम्बन्ध में रूढ़िरक्षक होना उचित नहीं है परन्तु साथ ही यह भी आवश्यक है कि संविधान प्रगति तथा उन्नति के मार्ग में बाधक सिद्ध न हो। इस संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों को देखने से यह स्पष्ट हो जायेगा कि इस संविधान में विकास के लिये बहुत स्थान है, संविधान में कुछ स्पष्ट उपबंधों के विरुद्ध संसद को विधि बनाने की शक्ति दी गई है और इसके लिये संविधान में संशोधन करने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में देश के कुछ भाग ऐसे हैं, विशेषतया वे राज्य जो पहले देशी राज्य कहे जाते थे, जहां संविधानिक तथा राजनैतिक उन्नति अभी उस स्तर तक नहीं पहुंची है जिसका वर्णन इस संविधान में किया गया है और न वहां का प्रशासन संगठन ही उस स्तर तक पहुंचा है। मुझे अधिकृत रूप से ज्ञात हुआ कि कि इन भागों को इस योग्य बनाने के लिये कि ये प्रथम सामान्य निर्वाचन में भाग ले सकें बहुत प्रयत्न करने की आवश्यकता पड़ेगी। जब ऐसे प्रश्नों के लिये संविधान बनाया जा रहा था जो प्रगति के विभिन्न स्तरों पर हैं तो यह स्वभाविक ही था कि रूक रूक कर कदम उठाया जाता। इसके अतिरिक्त संविधानों के प्रसंग में किसी बात को पवित्र नहीं कहा जा सकता। स्थिति में परिवर्तन होने पर हम एक नये संविधान का निर्माण भी कर सकते हैं। नये संविधान का निर्माण करने में हमारे लिये कोई भी बात बाधक सिद्ध नहीं होगी।

समाप्त करने के पूर्व श्रीमान, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि इस सभा का कार्य कभी बहुत शुष्क होने पर भी आपने उसका संचालन करने में धैर्य तथा सहिष्णुता का परिचय दिया जिसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं। यदि आप हमारा पथप्रदर्शन न करते और सचेष्ट न रहते तो इस संविधान के निर्माण में विलम्ब होता। आपने किसी व्यक्ति के हृदय में यह विचार नहीं उठने दिया कि उसे अपने विचार व्यक्त करने का पूर्ण अवसर नहीं मिला है। इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं समाप्त करता हूं।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति रावः** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय, मुझे इसका गर्व है कि संविधान के निर्माण-कार्य के साथ सम्बन्ध रखने का मुझे भी सुअवसर प्राप्त रहा है और इसका भी गर्व है कि हमें आपका सुयोग्य पथप्रदर्शन भी प्राप्त रहा है। मसौदा-समिति तथा उसके सभापति ने जिस उत्कृष्ट ढंग से अपना कार्य सम्पन्न किया है उसकी प्रशंसा में अपना भी थोड़ा बहुत योग देने के लिये मैं आपके समक्ष उपस्थित हुआ हूं। श्रीमान, उन्हें जिस स्थिति में और जिस समय में काम करना पड़ा और जिस परिश्रम से काम करना पड़ा उसे ध्यान में रखते हुए मैं कह सकता हूं कि कोई अन्य समिति अथवा निकाय हमारे लिये इससे अच्छा संविधान तैयार नहीं कर सकता था।

इस संविधान के कई दोष बताये गये हैं। उनमें से कुछ की मैं गणना करना चाहता हूं। एक आरोप यह लगाया गया है कि संविधान सभा ने इस संविधान को समाप्त करने में तीन वर्ष का अत्याधिक समय लगाया है। हमें यह न भूलना चाहिये कि अमरीका की संविधान सभा ने वहां का संविधान नौ वर्ष में तैयार किया था। आस्ट्रेलिया, कनाडा और अफ्रीका ने अपने संविधानों को तैयार करने में दो वर्ष से अधिक समय लगाया। एक और आपत्ति यह की गई है कि यह बहुत ही बड़ा संविधान हो गया है। अर्थात यह आकार में रूस के संविधान का तिगुना और अमरीका के संविधान का नौ गुना है। कुछ सदस्यों ने कहा है कि इस संविधान में नागरिक स्वातंत्र्यों का उल्लेख उपहासास्पद है और यह भी कहा है कि यह संविधान संसार के अनेक संविधानों की अनेक धाराओं का सम्मिश्रण मात्र ही है। यह भी कहा गया है कि केन्द्र को बहुत शक्तिशाली और राज्यों को पंगु बना दिया गया है। यह भी कहा गया है कि इस देश की स्थिति को देखते हुए इस संविधान में वयस्क मताधिकार की व्यवस्था करके बहुत खतरा उठाया गया है और यह भी कहा गया है कि गांधी के आदर्शों का परित्याग करके एक पूंजीमूलक संविधान की रचना की गई है और समाजवादी सिद्धान्तों को बलि की वेदी पर चढ़ा दिया गया है। संविधान के कुछ पंडितों ने यह आलोचना की है कि इस संविधान में गोवध-निषेध, ग्रामोद्योगों को प्रोत्साहन, ग्राम पंचायतों की स्थापना, अस्पृश्यता का उत्सादन, न्यायपालिका तथा कार्यपालिका का पृथक्करण जैसे जिन निदेशक तत्वों को स्थान दिया गया है वे सब प्रशासन सम्बन्धी विषय हैं और उन्हें संविधान में स्थान देकर उसे बोझीला बनाने की आवश्यकता नहीं थी। यह आपत्ति भी की गई है कि इस संविधान में जनमत लेने, अथवा जनमत द्वारा विधिनिर्माण करने के सम्बन्ध में कोई उपबन्ध नहीं रखे गये हैं।

इन आपत्तियों का खण्डन करते हुए मैं पूछता हूं कि इस संविधान में हमने आखिर किन बातों को रखा है? 1000 वर्ष से अधिक काल तक पराधीन रहने के पश्चात् आज भारत ने प्रथम बार सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य का रूप धारण किया है। हमने न्याय्य मूलाधिकारों की भी व्यवस्था की है, जिनका खण्डन होने पर कोई भी नागरिक उच्चतम न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो सकता है और अपनी शिकायत दूर करवा सकता है। हमने वयस्क मताधिकार प्रदान करके एक महान प्रयोग का सूत्रपात किया है। उसके फलस्वरूप आम चुनाव में लगभग सोलह से उठारह करोड़ लोग मत देंगे। हमने संसदात्मक लोकतंत्र को अपनाया है। चाहे आप संविधान की जिस धारा को भी उठायें आपको विदित हो जायेगा कि उसमें संसद के प्रभुत्व को स्वीकार किया गया है। भारत के इतिहास में प्रथम बार राजनैतिक, वित्तीय, आर्थिक न्यायिक तथा प्रतिरक्षा सम्बन्धी एकीकरण किया गया है। इस संविधान के अधीन अब छोटी छोटी सेनायें नहीं रह सकेंगी इस प्रकार की सेनाओं का एक उदाहरण हैदराबाद की सेना थी। इस संविधान के अधीन केवल एक सेना रहेगी। और वह भारत के राष्ट्रपति के कमान में रहेगी। राजनैतिक तथा आर्थिक एकीकरण के सम्बन्ध में मैं केवल लन्दन टाइम्स से एक उद्दरण दूंगा। लंदन टाइम्स के 7 फरवरी 1949 के अंक के एक अग्रलेख में कहा गया था:

"बिसमार्क जिन कार्यवाहियों से जर्मनी को एक सूत्र में बांधा था वे भारत सरकार की कार्यवाहियों की तुलना में बहुत साधारण प्रतीत होती है। क्योंकि

[श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव]

उसने अल्प काल में ही अनेक राज्यों का स्वरूप ही बदल कर भारत के बहुरंगी नक्शे को एक ही रंग में रंग दिया है। इतना विशाल परिवर्तन हुआ किन्तु वहां की शांति भंग नहीं हुई है।"

सरदार पटेल अपने मंत्रालय के कार्यों पर संतोष कर सकते हैं और गर्व कर सकते हैं। राष्ट्र इस महान नेता को श्रद्धांजलि अर्पित करता है। हमने राज्यों तथा प्रान्तों के विभेद को भी मिटा दिया है। आज इस संविधान के अधीन सभी प्रदेश राज्य हैं। श्रीमान, मुझे इस अब की प्रसन्नता है कि मूल अनुच्छेद 306 (ख) में जो थोड़ी सी कटुता थी वह अब उससे अर्थात् अनुच्छेद 372 से निकाल दी गई है। मुझे इसकी भी प्रसन्नता है कि अनुच्छेद 365 अब सभी राज्यों को लागू कर दिया गया है। यह अनुच्छेद 365 किसी व्यक्ति को पसंद नहीं है और मुझे तो बिल्कुल ही नापसंद है। किन्तु मुझे आशा है कि यह अनुच्छेद मृतप्राय ही रहेगा और इस अनुच्छेद के उपबंधों को व्यवहार में लाने का अवसर ही नहीं आयेगा। इस संविधान द्वारा "अल्पसंख्यक" और "अछूत" शब्दों का बहिष्कार कर दिया गया है। पृथक निर्वाचक-मंडलों को भी समाप्त कर दिया गया है। अस्पृश्यता को अपराध ठहराया गया है। राज्य के शासन के निदेशक तत्वों में समाजवाद के आधारभूत सिद्धान्तों का समावेश किया गया है और उपाधियों का अन्त कर दिया गया है।

स्वविवेक से प्रयोग की जाने वाली शक्तियों के सम्बन्ध में श्रीमान, मेरा निवेदन है कि मैंने जितनी सावधानी से हो सकता है उतनी सावधानी से संविधान का अध्ययन किया है किन्तु मुझे यह ज्ञात नहीं हो सका है कि राज्यपालों को उस दशा के अतिरिक्त कौन-सी स्वविवेक से प्रयोग की जाने वाली शक्तियां प्राप्त हैं जबकि आपात की घोषणा के सम्बन्ध में अथवा अनुसूची 5 और 6 के अधीन उसे अनुसूचित क्षेत्रों तथा आदिम-जातियों के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देना होगा। आपात सम्बन्धी शक्तियों के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि उन पर संसद का नियंत्रण रखा गया है और आपात की अवधि केवल दो मास रखी गई है। इसके पश्चात संसद का सत्र शीघ्र से शीघ्र जब कभी होगा उसमें उसकी सूचना संसद को देनी होगी। आपात सम्बन्धी शक्तियां भी विशेष स्थिति में ही प्रयोग की जा सकती हैं। अर्थात् जब युद्ध का खतरा हो अथवा बाहर से आक्रमण हुआ हो अथवा देश में कोई उपद्रव हो गया हो अथवा जब कोई राज्यपाल अथवा राजप्रमुख यह सूचना दें कि उनके प्रदेश में संविधान के अधीन शासन नहीं चलाया जा सकता, अथवा जब राष्ट्रपति का यह विचार हो कि किसी राज्य की आर्थिक स्थिरता अथवा उसकी साख संकट में पड़ गई है। फिर भी श्रीमान, इन आपात-विषयक विधियों का संसद पुनर्विलोकन करेगी और यदि वह इस आशय का एक प्रस्ताव पारित करेगी कि जब आपात की स्थिरता न समझी जाये तो इस सम्बन्ध में जो घोषणा की गई थी उसका शून्यन हो जायेगा।

इस संविधान के अधीन अन्तर्राज्यिक व्यापार और वाणिज्य अबाध रूप से किया जा सकता है। न्यायपालिका की स्वाधीनता के सम्बन्ध में तथा महालेखापरीक्षक और

विधान मंडलों के कार्यालयों की स्वाधीनता के सम्बन्ध में संविधान में विशेष उपबन्ध रखे गये हैं। निर्वाचनों की ऐसी व्यवस्था की गई है कि कार्यपालिका उनमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। हमने वित्त आयोग अन्तर्राज्यिक परिषद, लोक सेवा आयोग और निर्वाचन-आयोग के समान अखिल भारतीय आयोग स्थापित किये हैं और ऐसी व्यवस्था की है कि कार्यपालिका उनके कार्य में हस्तक्षेप नहीं कर सकेगी। श्रीमान, मेरा निवेदन है कि इन उपबंधों को संविधान में रख कर हमने कोई साधारण कार्य नहीं किया है।

मैं यह निवेदन कर चुका हूं कि कार्यपालिका के पास अत्यधिक कार्य रहा है और उसे बहुत परिश्रम करना पड़ा है। यदि हमें इस प्रकार के कार्य का कहीं उदाहरण मिलता है तो अमरीका के संविधान निर्माण के इतिहास में मिलता है। मैं कार्ल वान डोरेन द्वारा लिखित "ग्रेट रिहर्सल" पुस्तक से एक उद्धरण देता हूं। उसमें कहा गया है:

> "उस समय के अमरीका निवासियों के हृदय में अपने अपने राज्यों के लिये वफादारी बसी हुई थी। नवीन केन्द्रीय सरकार के प्रति वफादारी की भावना उत्पन्न करना कोई आसान काम नहीं था। कई प्रकार के समझौतों को करने की तथा अनेक प्रकार के राजनैतिक संगठन स्थापित करने की आवश्यकता थी और तभी यह आशा की जा सकती थी कि सम्मेलन में आये हुए प्रतिनिधि नवीन संविधान के सम्बन्ध में एकमत हो सकेंगे। शांति स्थापित होने पर राज्य पृथक होने लगे थे। उनमें से अधिकांश राज्य अपने संकुचित स्वार्थों का परित्याग करने में अपने को असमर्थ पा रहे थे। देश के आर्थिक हित तो संकटापन्न थे ही किन्तु साथ ही वाणिज्य के क्षेत्र में उससे कहीं अधिक अव्यवस्था फैल गई थी।"

न्यायाधिपति बेंजेमिन कार्डोजो ने कहा था:

> "विभिन्न राज्यों के लोगों को साथ ही पार उतरना चाहिये अथवा साथ ही डूब जाना चाहिये और यह समझना चाहिये कि अन्ततोगत्वा सम्पन्नता और सम्मुत्थान एकता ही से सम्भव है, विभेद से नहीं।"

1786 में वाशिंगटन ने लिखा था:

> "प्रत्येक राज्य ज्वालाग्राही पदार्थों से परिपूर्ण है जिन्हें एक चिन्गारी भी प्रज्वलित कर सकती है।"

कार्ल वान डोरेन की पुस्तक के प्रथम अध्याय का शीर्षक "सेनानायक और दार्शनिक" है। सेनानायक से लेखक का अभिप्राय जार्ज वाशिंगटन से है, जिन्होंने अपने देश को विजय पथ पर अग्रसर किया था। दार्शनिक से बेंजेमिन फ्रेंकलिन अभिप्रेत है, जिन्होंने अपने राज्य की ऐसी सेवा की थी कि उनका नाम उनके समय में उनके प्रत्येक देशवासी की जबान पर चढ़ गया था। लेखक कहता है:

> "संविधान निर्माण सभा अपने कार्य में बहुत कुछ सेनानायक की गम्भीरता तथा सहज-बुद्धि और दार्शनिक की उदारता तथा परिपक्व बुद्धि के कारण सफल हुई।"

[श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव]

इन दो महान नेताओं के सम्बन्ध में कार्ल वान डोरेन लिखता है:

"क्रान्तिकाल में वाशिंगटन को गृह-कार्य का और फ्रेंकलिन को वैदेशिक-कार्य का बहुत बड़ा भार उठाना पड़ा। वे इतने सत्यनिष्ठ थे कि सन्देह का उन पर कोई प्रभाव ही नहीं पड़ता था और इतने महान थे कि उनके सम्बन्ध में द्रोह की कल्पना तक नहीं की जा सकती थी।"

मेरा निवेदन है कि लेखक की ये बातें भारत के प्रसंग में सौ-गुना सच्ची ठहरती हैं। हमारे राज्य का कार्य संचालन जिन दो महान नेताओं ने किया है उन्हें बहुत बड़ा भार उठाना पड़ा है। इस संविधान सभा को भी अत्यधिक कार्य करना पड़ा है। क्योंकि अन्तरिम काल में इसे संसद के रूप में भी कार्य करना पड़ा है।

इन दो वर्षों में हमें कई बाधाओं को दूर करना पड़ा और देश के जटिल प्रश्नों को हल करने में हमें जितना परिश्रम करना पड़ा उसे ध्यान में रखते हुए मैं यह कहूंगा कि हमने बहुत कम समय लिया और वास्तव में इस स्थिति में अन्य कोई सभा इससे कम समय न लेती।

मूलाधिकारों के परिसीमनों के सम्बन्ध में यह आलोचना की गई है कि हमने अबाध रूप से अन्य संविधानों के अंगों को स्थान दिया है। इस सम्बन्ध में मेरा केवल यह निवेदन है कि संसार का कोई भी लिखित संविधान अन्तिम संविधान नहीं कहा जा सकता। हमें अन्य राष्ट्रों के अनुभव के आधार पर कार्य करना होगा। यदि हम युद्ध के पहले के अथवा बाद के काल पर विचार करें, अथवा युद्धकाल पर विचार करें और इसका अध्ययन करें कि संघीय संविधान किस प्रकार प्रवर्तन में आये हैं तो हमें ज्ञात हो जायेगा कि प्रत्येक देश ने अपने अपने संविधानों के अधीन केन्द्र को शक्तिशाली बनाने का ही प्रयास किया है। अणु-युग में केन्द्र को शक्तिशाली ही बनाने की आवश्यकता है। गुजरात में सूखा पड़ने और आंध्र प्रदेश में बाढ़ आने का तो कहना ही क्या है—आज यदि कनाडा में सूखा पड़े और आस्ट्रेलिया में फसल अच्छी हो तो संसार की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव पड़ता है और हमारे देश पर भी कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता है। हमें इस प्रकार के बड़े बड़े प्रश्नों को अपने देश में भी हल करना पड़ा है और इस समय भी हल कर रहे हैं। मेरा निवेदन है कि इनकी उपेक्षा करना मूर्खता ही होगी। जिन उपबन्धों को रखा गया है उन्हें संकट के निवारणार्थ ही रखा गया है। मेरे विचार से मसौदा समिति के सदस्यों की भी ये उपबन्ध पसन्द नहीं है। मुझे विश्वास है कि इस संविधान को व्यवहार में लाने में कोई ऐसा अवसर न आयेगा जब कि आपात-सम्बन्धी शक्तियों को प्रयोग में लाते हुये मूलाधिकारों के इन परिसीमनों को प्रभाव में लाना होगा।

यह भी आलोचना की गई है कि गांधी जी के सिद्धान्तों को बलि की वेदी पर चढ़ा दिया गया है। मैं यह निवेदन कर चुका हूं कि हमने अस्पृश्यता का अन्त करने, राष्ट्र-भाषा को व्यवहार में लाने, साम्प्रदायिक सामंजस्य उत्पन्न करने तथा अल्पसंख्यकों के प्रति सद्भावना प्रदर्शित करने और उनके हितों की सुरक्षा की प्रत्याभूति देने के सम्बन्ध में और ग्राम पंचायतों, ग्रामोद्योगों तथा दुधारू ढोरों

की रक्षा को बढ़ावा देने के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे हैं। इस देश में गांधीवाद इन्हीं बातों से फैला और इन्हीं के फलस्वरूप यहां अहिंसात्मक क्रांति का सूत्रपात हुआ। यदि संविधान में इन सिद्धान्तों का समावेश किया गया है तो मैं पूछता हूं कि इस संविधान द्वारा गांधीवाद को किस प्रकार बलि की वेदी पर चढ़ा दिया गया है। मेरा निवेदन है कि राष्ट्रपिता ने जिस कार्यक्रम की घोषणा की थी उसे व्यवहार में लाने के लिये पर्याप्त उपबन्ध रखे गये हैं। इस संविधान में सर्वोत्कृष्ट भारतीय परम्परा, अन्य देशों के राजनैतिक और संविधानिक अनुभव और गांधी के आदर्शों का बहुत सामंजस्यपूर्ण समन्वय है। सारा संविधान वास्तविकता के रंग में रंगा हुआ है। यदि सद्भावना तथा देशसेवा का परिचय दिया गया और स्वातन्त्र्य संग्राम के समय हम जिस आत्मत्याग की भावना से ओतप्रोत थे वही आत्मत्याग अब भी प्रदर्शित किया गया तो इस संविधान से देश सुखी हो सकता है। अब स्वतन्त्रतात्मक कार्य करने का समय आ गया है। मुझे विश्वास है कि यदि हमने उसी सद्भावना का परिचय दिया जिसका हमने इस सभा में भाषा के प्रश्न, अल्पसंख्यकों के प्रश्न, नागरिकता के प्रश्न तथा मुआवजे के प्रश्न जैसे अनेक प्रश्नों को हल करने में परिचय दिया है तो इस संविधान द्वारा इस देश में एक नवीन युग का प्रवर्तन होगा।

भाषा के प्रश्न के सम्बन्ध में मैं सभा का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं कि जिस प्रस्ताव को इस सभा ने स्वीकार किया है उसे हम व्यवहार में लाने लगे हैं। मुझे सभा को यह सूचित करते हुए हर्ष है कि मैसूर सरकार ने हाल में एक आज्ञा निकाली है जिसके फलस्वरूप सभी हाई स्कूलों में हिन्दी अनिवार्य रूप से सिखाई जायेगी। साथ ही मुझे इसका खेद भी है कि हमारे कुछ हिन्दीभाषी मित्र इस प्रकार के कार्य करने के लिये उत्साह नहीं दिखा रहे हैं। इस सभा ने सभी की सहमति से जो प्रस्ताव स्वीकार किया था उसकी हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने आलोचना की है। मैं अपने हिन्दी भाषी मित्रों से अपील करता हूं कि वे आदान-प्रदान की भावना से कार्य करें और भाषा के प्रश्न के सम्बन्ध में हमें अपने साथ लें। मैं फिर निवेदन करता हूं कि यदि सद्भावना का परिचय दिया गया तो इस प्राचीन देश में इस संविधान के फलस्वरूप सुख और संतोष का साम्राज्य छा जायेगा।

***श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस संविधान में कोई न कोई दोष निकाल कर कई सदस्यों ने इसकी आलोचना की है। उन्होंने जो तर्क उपस्थित किये हैं उनके सम्बन्ध में मैं किसी विवाद में नहीं पड़ना चाहता। जनसाधारण की दृष्टि से इस पर विचार करते हुए मैं कह सकता हूं कि इस संविधान में जनसाधारण के विकास के लिये, तथा वर्तमान विषम स्थिति के निवारण के लिये, पर्याप्त व्यवस्था की गई है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस संविधान के अधिकांश अनुच्छेद 1935 के अधिनियम से लिये गये हैं, किन्तु इस सभा ने एक आधारभूत परिवर्तन किया है। वह परिवर्तन वयस्क मताधिकार प्रदान करने से हुआ है। इस अधिकार से 1935 के अधिनियम का स्वरूप ही बदल गया है। आज नहीं तो किसी न किसी दिन अवश्य ही इससे वास्तविक लोकतन्त्र का प्रभुत्व स्थापित हो जायेगा। चाहे 1935 के भारत-शासन-अधिनियम में कैसे ही उपबन्ध क्यों न हों, हमारे देश का स्वल्प-अधिकार प्राप्त वर्ग शासन की बागडोर अपने हाथ में नहीं ले सकता और वह इस कारण कि उसे मताधिकार प्राप्त नहीं है। वास्तव में प्रशासन में उसका कोई हाथ नहीं है परन्तु जब संविधान प्रवर्तन

[श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन]

में आयेगा और उसके अधीन प्रथम निर्वाचन हो जायेगा तो, मेरा विश्वास है, सारी स्थिति ही बदल जायेगी। 1935 के अधिनियम द्वारा जनसाधारण को सीमित शक्ति दी गई है परन्तु चूंकि इस देश के जनसाधारण अशिक्षित हैं इसलिये कुछ वर्गों के प्रभुत्व के कारण, अर्थात् उन लोगों के प्रभुत्व के कारण जो सम्पत्तिवान तथा बुद्धिमान हैं, वे उस सीमित शक्ति को भी प्रयोग नहीं कर सकते। किन्तु भविष्य में इस संविधान के प्रवर्तन में आने पर भारत की 85 प्रतिशत जनता का मत ही हमारे विधान-मंडलों के निर्माण में तथा संविधानिक प्रभुत्वों और प्रान्तों और केन्द्र में मंत्रिमंडलों के बनाने में निर्णायक अथवा पहले से अधिक प्रभावी सिद्ध होगा। मैं यह कहूंगा कि उनकी आवाज़ का प्रभाव होगा। अन्यथा अगले निर्वाचन में वे अपने मित्रों को चुन सकेंगे। यह आधारभूत परिवर्तन हो गया है। इस दृष्टि से भले ही इस संविधान के उपबन्ध 1935 के अधिनियम से लिये गये हों किन्तु स्थिति बिल्कुल ही भिन्न हो जायेगी।

इसके अतिरिक्त श्रीमान, यह कहा गया है कि हमने इस संविधान को बनाने में बहुत समय लगाया है। मुझे यह विदित नहीं है, किन्तु अभी मेरे जो माननीय मित्र बोले थे उन्होंने बताया था कि अमरीका के संविधान को बनाने में 9 वर्ष का समय लगा था। जिन माननीय सदस्यों ने इस संविधान की आलोचना की है उनसे मेरा अनुरोध है कि वे एक बात स्मरण रखें। इस संविधान के निर्माण को आरम्भ करने के पूर्व इस देश की क्या दशा थी? इस संविधान के निर्माताओं को अथवा देश के भाग्य का निर्णय करने वालों को कौन से वचन पूरे करने थे और किन प्रश्नों को हल करना था? मैं दो बातें कहूंगा। पहली बात यह है कि इस देश में पांच सौ बासठ देशी राज्य थे। जब ब्रिटिश शासन समाप्त हुआ तो वास्तव में प्रान्तों के अतिरिक्त देश पांच सौ बासठ भागों में विभाजित था। यदि यह संविधान जल्दी में बनाया जाता तो क्या इसका स्वरूप वही होता जो आज है? यह आसानी से समझा जा सकता है कि इसका स्वरूप इसके वर्तमान स्वरूप से बिल्कुल भिन्न होता। देशी राज्यों की समस्या को माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल तथा इस देश के अन्य नेताओं ने जिस ढंग से हल किया है उसके लिये हम उनके आभारी हैं। उन्होंने इस प्रश्न को ऐसे सुन्दर ढंग से सुलझाया कि भले ही अंग्रेज़ भारत में अव्यवस्था उत्पन्न करके चले गये थे किन्तु थोड़े ही समय में यह देश एक हो गया ओर सारे देश के लिये एक ही संविधान बनाया गया। यत्र तत्र कुछ अन्तर रखा गया है किन्तु अभी तक हमें जो सफलता प्राप्त हुई है उसे भी हमें स्मरण रखना चाहिये। उसे स्मरण रखते हुए मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है कि ये अन्तर भी तुरन्त ही मिट जायेंगे।

दूसरी बात जिसे मैं बताना चाहता हूं यह है कि चाहे इस प्रकार की स्थिति के लिये कोई भी क्यों न उत्तरदाई रहा हो किन्तु यह स्वीकार करना होगा कि हमारे देश में कई साम्प्रदायिक वर्ग थे और जहां तक मैं जानता हूं, भारत छोड़ने के पूर्व अंग्रेज़ों ने हमारे नेताओं से यह वचन लिया था कि अल्पसंख्यकों के सभी अधिकारों का सम्मान किया जायेगा। हमारे नेताओं ने इस वचन को पूरा किया है। ऐसी स्थिति के होते हुए भी हम देखते हैं कि हमारा संविधान उन अनेक दोषों से मुक्त है जो उस समय वर्तमान थे। बात यह नहीं है कि बहुसंख्यक दल ने अपने बहुमत से ही इस पेचीदे प्रश्न को सुलझाया है और संविधान को उन दोषों से मुक्त किया है। वास्तव में जब अल्पसंख्यकों को यह विश्वास हो गया कि भय

का कोई कारण नहीं है और भारत के कल्याण के हेतु उन्हें इन दोषों को दूर करना चाहिये तो वे स्वेच्छा से इसके लिये सहमत हो गये। अपने समुदाय के सम्बन्ध में मैं यह स्वीकार करता हूं कि हमने यह विचार किया कि कम से कम कुछ समय के लिये हमें कतिपय विशेषाधिकार प्रदान किये जाने चाहिये और मैं संविधान सभा के सदस्यों को तथा इस देश के नेताओं को हमें इन विशेषाधिकारों को कुछ समय के लिये प्रदान करने के लिये कृतज्ञतापूर्वक धन्यवाद देता हूं। मैं पूछता हूं कि यदि यह संविधान जल्दी में बनाया गया होता तो क्या इसे इसका वर्तमान स्वरूप प्राप्त होता? यद्यपि मेरे विचार से इस के निर्माण में कोई विलम्ब नहीं हुआ। किन्तु यदि हुआ भी है तो यह देश के कल्याण के लिये ही हुआ है।

जैसाकि मैं आरम्भ में ही निवेदन कर चुका हूं, जनसाधारण की दृष्टि से मेरी यह धारणा है कि भविष्य में देश के प्रशासन में जनसाधारण का अधिक हाथ होगा। आखिर लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था स्थापित करने के लिये ही हम वचनबद्ध हैं और इस सम्बन्ध में कोई मतभेद नहीं है कि हमें लोकतन्त्रात्मक शासन-प्रणाली के अतिरिक्त कोई अन्य शासन-प्रणाली स्वीकार करनी चाहिये थी। जब हम यह स्वीकार करते हैं कि यदि संसार में कोई लोकतन्त्र-प्रणाली सफलता के साथ व्यवहार में आई हुई है तो वह संसदात्मक लोकतन्त्र प्रणाली ही है तो हमें अवश्य ही लोकतन्त्र सम्पन्न देशों के उन संविधानों की परीक्षा करनी पड़ती है जो इस समय सफलता के साथ व्यवहार में आये हुए हैं। मेरे विचार से भारत में अपने स्वभाव के कारण ही संसार में जहां कहीं संसदात्मक लोकतन्त्र-प्रणाली प्रवर्तन में है वहां से सर्वोत्कृष्ट अंशों को स्वीकार किया है। मैं इसे फिर दुहराना चाहता हूं कि इस प्रणाली से ही जन-साधारण की तथा पददलित मानव के उत्थान की आशा की जा सकती है। जिस संसदात्मक प्रणाली को हमने स्वीकार किया है उसके अधीन देश का शासन एक निर्वाचित सभा करेगी और यद्यपि उसके दो भाग हैं, अर्थात् केन्द्र में दो सभायें हैं, किन्तु धन विधेयकों के सम्बन्ध में व्यय के सम्बन्ध में तथा आय-व्ययक के साधनों तथा उपायों के सम्बन्ध में, जिन का जनसाधारण पर सारवान प्रभाव पड़ता है, लोक सभा का मत ही अन्तिम समझा जायेगा। वास्तव में इस देश के जनसाधारण के सभी दोषों की जड़ आर्थिक दुर्व्यवस्था ही है। हमने जिस संविधान का निर्माण किया है यदि उसे हमने यथोचित रूप से व्यवहार में लाना है तो जनसाधारण को सचेत रहना होगा। यदि वे बुद्धिमान होंगे और सचेत रहेंगे तो वे ठीक तरह के नेताओं को चुनेंगे और वे जनसाधारण को ऊपर उठायेंगे। इस प्रकार वे अपने को लोक सभा के तथा प्रान्तीय विधान सभा के प्रभु सिद्ध करेंगे। वही इस का निर्णय करेंगे कि लोक कल्याण के लिये किस मार्ग का अवलम्बन किया जाये। मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता कि किसी भी संसदात्मक लोकतन्त्र प्रणाली के अधीन इससे अधिक और कुछ किया जा सकता है। हो सकता है कि संविधान में कुछ दोष हों किन्तु जैसा कि कई माननीय सदस्य कह चुके हैं, यदि संविधान के कुछ उपबन्धों को संशोधित करने की आवश्यकता हुई तो उसके लिये पर्याप्त व्यवस्था है।

जहां तक निकट भविष्य में किये जाने वाले शासन-प्रबन्ध का सम्बन्ध है, मेरा इस सभा के माननीय सदस्यों से अनुरोध है कि इस संविधान के एक निदेशक सिद्धान्त की ओर वे ध्यान दें। मेरा अभिप्राय ग्राम-पंचायतों के संगठन से है। साथ ही चौदह वर्ष तक के बच्चों के लिये निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध करने के सम्बन्ध

[श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन]

में जो निदेशक सिद्धान्त रखे गये हैं उनकी ओर भी वे ध्यान दें। यदि इन दो निदेशक सिद्धान्तों का हमारी भावी सरकार ने यथोचित रूप से अनुसारण किया तो मेरे विचार से निकट भविष्य में ही सारे देश की स्थिति में सुधार हो जायेगा। भारत जैसे विशाल देश में जिसका विस्तार सम्भवत: यूरोप से भी अधिक है और जिसकी जनसंख्या पैंतीस करोड़ है, केन्द्र मूलक शासन-प्रणाली से इन दोषों का निराकरण नहीं हो सकता। कोई भी केन्द्र मूलक सरकार ऐसे प्रशासन संगठन को लेकर जैसा कि हमें अंग्रेजों ने सौंपा है, उन दोषों को दूर नहीं कर सकती जिनके कारण देहात के लोगों का तथा जिन लोगों को अधिकार प्राप्त नहीं हैं उनका जीवन ही नष्ट हो रहा है। जब हमने वयस्क मताधिकार प्रदान किया है और देश के प्रत्येक वयस्क नागरिक का विश्वास किया है और यह स्वीकार किया है कि वयस्क नागरिक ही सरकार स्थापित करने के अधिकारी हैं तो यदि हम इन पंचायतों के निर्माण में एक दिन की भी देर करें तो यह एक मूर्खता ही होगी। जब आपने वयस्क नागरिकों का विश्वास किया है और सरकार स्थापित करने के सम्बन्ध में उन्हें मताधिकार प्रदान किया है तो आपको उन्हें कुछ जिम्मेदारी देनी ही चाहिये। यदि आप यह करेंगे तो आपका प्रति दिन के प्रशासन के कार्य का बोझ बहुत हल्का हो जायेगा। जब तक आप सरकारी कर्मचारियों से यह आशा करेंगे कि वे जनसाधारण की देख-रेख करें तो जनसाधारण गैर-जिम्मेदार ही रहेंगे और सरकार की शिकायत ही करते रहेंगे। किन्तु जैसे ही आप स्थानीय प्रशासन की कुछ जिम्मेदारी उन पर डालेंगे वैसे ही वे अपने मामलों में बहुत दिलचस्पी लेने लगेंगे।

निस्संदेह यह आलोचना की गई है कि, चूंकि हमारे ग्रामवासी अशिक्षित हैं इस लिये ग्राम पंचायतें सफल नहीं होंगी और उसका परिणाम यह होगा कि लोग केवल शक्ति के पीछे ही दौड़ेंगे। किन्तु यदि हम दैनिक पत्रों को देखते रहें तो हमें विश्वास हो जायेगा कि अधिकांश प्रान्तों में प्रान्तीय नेता भी शक्ति के ही पीछे दौड़ते हैं। इस लिये इस तर्क में कुछ सार नहीं है कि जनसाधारण स्थानीय प्रशासन के तथा अपने हितों की चिन्ता करने के योग्य नहीं हैं। मेरा केवल यह निवेदन है कि जितने शीघ्र हो सके हम इन ग्राम-पंचायतों को ही सौंप दें ताकि इस देश के शासन सम्बन्धी अनेक प्रकार के प्रश्न हल हो सकें।

अन्त में मैं कृतज्ञता पूर्वक महात्मा का स्मरण करता हूं और उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं। 1938 में कलकत्ता में मुझे उन्हें मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था और मैंने उनसे स्वल्प-अधिकार प्राप्त अनुसूचित जातियों की बहुत सी समस्याओं के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया था। कई बातों के सम्बन्ध में मैं उनसे सहमत हुआ था और उनमें से एक यह थी कि अंग्रेज़ जब तक पदारूढ़ हैं, अनुसूचित जातियों के लोगों को उनका विरोध करते हुये अधिकारों की आशा नहीं करनी चाहिये। महात्मा ने यह भी कहा था कि जब कांग्रेस के हाथ में शक्ति आ जायेगी तो अनुसूचित जातियों को जिन अधिकारों की आवश्यकता होगी वे उन्हें दे दिये जायेंगे। मैं देखता हूं कि एक दशाब्दी में ही सत्य और अहिंसा के उस उपासक की वाणी सत्य हो गई है। भारत अब स्वाधीन हो गया है। मैं महात्मा के उन शब्दों का भक्तिपूर्वक स्मरण करता हूं। भारत की अनुसूचित जातियों को जो विशेषाधिकार प्रदान किये गये हैं उनके लिये मैं इस आदरणीय सभा के सभी

सदस्यों का भी आभारी हूं। मैं आदरपूर्वक उस महान आत्मा को नमन करता हूं जिसे सदा अनुसूचित जातियों के लोगों के हितसाधन की चिंता रहती थी।

***श्री पी. कक्कन** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, डॉ. अम्बेडकर ने जो प्रस्ताव उपस्थित किया है उसका समर्थन करने के लिये मैं अपनी जगह से उठा हूं। इस संविधान द्वारा हरिजनों को सभी प्रकार की सहायता देने के लिये मैं आपको तथा मसौदा समिति को धन्यवाद देता हूं। श्रीमान, आपको विदित ही है कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने सवर्ण हिन्दुओं का मस्तिष्क ही बदल दिया और संयुक्त निर्वाचन-प्रणाली द्वारा अस्पृश्यता का अन्त करने के लिये मार्ग प्रशस्त किया। संयुक्त निर्वाचन-प्रणाली के फलस्वरूप अब हमने अपना लक्ष्य प्राप्त किया है।

श्रीमान, मेरा विश्वास है कि केवल कांग्रेस दल ही हरिजनों के उत्थान के लिये कार्य कर रहा है और अन्य कोई दल इस दिशा में कार्य नहीं कर रहा है। इस लिये इस आदरणीय सभा के मंच से मैं भारतीय संघ के हरिजनों से अपील करता हूं कि वे कांग्रेस के सदस्य हों और हरिजनों के उत्थान के लिये कार्य करें। इस सम्बन्ध में मैं डॉ. अम्बेडकर से भी अपील करता हूं कि वे कांग्रेस के सदस्य हो जायें और दस वर्ष में ही हरिजनों को पूर्ण रूप से समुन्नत बनाने के लिये कार्य करें।

श्रीमान, मुझे इस की प्रसन्नता है कि इस संविधान में पंचायत-प्रणाली को स्थान दिया गया है।

मुझे आशा है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में पंचायत-प्रणाली को व्यवहार में लाने के लिये भारत सरकार आवश्यक कार्यवाही करेगी और जैसी कि महात्मा गांधी की इच्छा है बिना जाति, धर्म अथवा रंग का विभेद किये हुए ग्राम-स्वराज का विकास करेगी।

अन्त में श्रीमान, मेरा निवेदन है कि वयस्क मताधिकार की प्रणाली को स्वीकार करके हमने ग्रामवासियों को शक्ति प्रदान की है। मुझे आशा है कि भविष्य में मतदाता अपने मताधिकार का दुरुपयोग नहीं करेंगे। श्रीमान, मेरा यह भी विश्वास है कि भारत के लोग गांधीवाद को नहीं भुलायेंगे। गांधीवाद का लक्ष्य केवल भारत का ही कल्याण नहीं है बल्कि सारे विश्व का कल्याण है। मैं विशेषतया मद्रास प्रान्त के प्रतिनिधि माननीय श्री गोपालास्वामी आयंगर, श्री अल्लादि कृष्णस्वामी अय्यर और श्री टी.टी. कृष्णमाचारी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं। मसौदा समिति में रह कर इन्होंने देश की बहुत बड़ी सेवा की है।

***श्री थीरुमल राव** (मद्रास: जनरल): श्रीमान, मुझे इसका गौरव है कि जिन लोगों ने इस संविधान का मसौदा तैयार करने में अपना समय लगाया है तथा श्रम किया है उनकी प्रशंसा करने का मुझे भी अवसर प्राप्त हुआ है। मैं यहां कुछ शब्द कह कर संतोष करने के लिये नहीं आया हूं। इस संविधान के निर्माण में मैंने भी थोड़ा बहुत योग दिया है और अब इस अन्तिम अवसर पर मैं उस सम्बन्ध में कुछ अन्तिम शब्द कहने आया हूं।

इस अवसर पर मुझे उस महान आत्मा का स्मरण हो आता है जिसने मिट्टी में प्राण फूंक कर एक राष्ट्र का निर्माण किया। उसमें स्वतन्त्रता के विचारों का संचार किया और उन विचारों को कार्य रूप में लाने के लिये उससे दृढ़

[श्री थीरुमल राव]

प्रतिज्ञा कराई तथा अपने जीवन-काल ही में अपने लक्ष्य को प्राप्त कर दिखाया। यह कहा जा सकता है कि लक्ष्य का केवल दर्शन-मात्र उसकी प्राप्ति से भिन्न है। लक्ष्य के दूर होने से हमें पहले जो प्रेरणा प्राप्त होती थी वह अब प्राप्त नहीं होती है क्योंकि अब हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर चुके हैं और यह देख रहे हैं कि इस समय जो स्थिति उपस्थित है उसमें हमें किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।

मैं यह विचार करता था कि इस संविधान के निर्माता तथा वे नेता जिनसे मसौदाकारों को प्रेरणा प्राप्त हुई है, इस संविधान में महात्मा गांधी का राष्ट्र के निर्माता के रूप में तथा आधुनिक भारत के जन्मदाता के रूप में कृतज्ञतापूर्वक उल्लेख करेंगे, विशेषतया जब कि उन्होंने सारे संसार को एक नवीन संदेश सुनाया है। मैं कह नहीं सकता कि किन कारणों से उन्होंने संविधान के मसौदे में उनके नाम का उल्लेख नहीं किया, यद्यपि यह हमारी परम्परा के, प्राचीन भारत की परम्परा के अनुरूप ही होता क्योंकि हम प्रत्येक सुअवसर पर अपने पूर्वजों के नामों का प्रातः से लेकर सायंकाल तक उच्चारण करते हैं। यदि हम अपने संविधान के किन्हीं अनुच्छेदों में महात्मा गांधी के नाम का उल्लेख कर देते तो यह उपयुक्त ही होता, किन्तु हमारे नेताओं की यह इच्छा नहीं थी।

निकट भविष्य में युगप्रवर्तक घटनायें घटित होने जा रही हैं। पश्चिमी देशों में उपद्रव हो चुका है। वहां स्वतन्त्रता का युग कुछ वर्षों तक रहा और अब समाप्त हो गया है। अब पूर्वी देशों में नवीन विचारों का उदय हो रहा है। भारत पश्चिमी देशों और पूर्वी देशों के मध्य में स्थित है और अब यहां भी इस संविधान द्वारा स्वशासन के युग का प्रवर्त्तन होने जा रहा है।

इस संविधान के गुणों के सम्बन्ध में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं क्योंकि वास्तव में यह संविधान पिछली कुछ घटनाओं की देन है। वास्तविक स्थिति की उपेक्षा करने से हमें कुछ लाभ न होगा। आरम्भ में इस संविधान सभा में भाषण देते हुए पंडित नेहरू ने कहा था कि हम एक ऐसे संविधान का निर्माण करें जिससे हमें एक स्वतन्त्र सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न गणराज्य प्राप्त हो सके। अब 'स्वतन्त्र' शब्द को हटा दिया गया है और उसके स्थान पर 'लोकतंत्रात्मक' शब्द रखा गया है। इसके फलस्वरूप हम अभी साम्राज्य में ही हैं और ब्रिटिश राष्ट्रमंडल से अभी हमारा नाता नहीं टूटा है। यह पिछली घटनाओं के फलस्वरूप हुआ है और वास्तव में 150 वर्ष के ब्रिटिश शासन के पश्चात् यही सम्भव भी था। भारत को अपने सभी बन्धनों से मुक्त होने के लिये—राष्ट्रमंडल के बन्धन से भी मुक्त होने के लिये—अभी कुछ समय तक ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में रहना होगा। पिछली घटनाओं से विवश होकर हम राष्ट्रमंडल में रह रहे हैं। पहले हम ऋणी थे किन्तु अब ऋण दाता हो गये हैं और हमारे भूतपूर्व प्रभुओं को हमें बारह करोड़ का ऋण चुकाना है। जब तक हम इंग्लिस्तान से यह राशि वसूल नहीं कर लेते और जब तक हम उस देश को दिये हुये सभी वचनों से मुक्त नहीं हो जाते तब तक अंग्रेज़ों से नाता तोड़ने से देश का हित-साधन नहीं होगा। मेरे विचार से इसी को ध्यान में रखकर हमारे नेता तथा यह सभा ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में रहने के लिये राजी हुए हैं किन्तु वे कम से कम समय तक राष्ट्रमंडल में रहेंगे।

जहां तक संविधान का सम्बन्ध है, यह एक ऐसी कृति है जिस पर हमारे नेता गर्व कर सकते हैं। अंग्रेजों ने इस देश में एक सत्तात्मक शासन स्थापित करके

तथा इसे ऐसे भागों में विभाजित करके जिन पर लोग अपना नियंत्रण नहीं रख सकते थे, अपना आधिपत्य जमा रखा था। उन्होंने 630 देशी राज्यों की स्थापना की थी, जो 630 अल्स्टरों के समान थे। उन्होंने उन्हें बहुत पिछड़ी हुई दशा में रखा था और केन्द्र से ही वे उनके सम्बन्ध में नीति निश्चित करते थे। उन्होंने मुस्लिम समुदाय को 'संयुक्तस्वार्थ' का रूप दिया था और उसे पृथक् निर्वाचक-मंडल प्रदान किये थे। उन्होंने उसे भारत की राष्ट्रीयता का खंडन करने की छूट दे रखी थी। उन्होंने अखिल भारतीय प्रशासन स्थापित कर रखा था और हम सभी को अनुभव है कि प्रशासकों की वफादारी का हर कदम पर मूल्य चुकाया जाता था और वे उसके बदले भारतीय स्वातन्त्र्य का बलिदान करते थे। अंग्रेज़ों के शस्त्रागार में ये तीन शस्त्र थे और इनके बल पर उन्होंने इस देश में एक केन्द्र नियंत्रित शासन स्थापित कर रखा था। वे यह समझते थे कि जब तक उनका साम्राज्य है तब तक यह शासन भी बना रहेगा। सम्भवत: यह लार्ड मार्ले ने ही कहा था कि वे इस की कभी भी कल्पना नहीं कर सकते कि मनुष्यों के संसार में एक दिन वह आयेगा जब ब्रिटिश साम्राज्य मिट जायेगा। अंग्रेज़ राजनीतिज्ञ प्रशासन करते रहे किन्तु उन्होंने इसकी कभी कल्पना तक नहीं की थी कि उनका भाग्य इस देश के एक सामान्य व्यक्ति से टकरायेगा जिसे साम्राज्यवाद के सम्राट श्री चर्चिल नफरत से "नंगा फकीर" कहते थे और न इसकी ही कल्पना की थी कि वह सत्याग्रह का नारा लगाकर उनकी सभी योजनाओं को तथा उनके साम्राज्य को मिटा देगा। हमें विभाजित भारत सौंपा गया किन्तु सरदार पटेल अपनी प्रखर व्यवहारिक बुद्धि से समझ गये कि उसके पीछे कौन सी चाल छिपी हुई है और उन्होंने उसी के समान एक सशक्त नीति से उसका निराकरण करना चाहा। अंग्रेज़ भारत छोड़ कर चले गये थे और इसलिये विषम स्थिति का निराकरण करने के लिय हमें वही कदम उठाने पड़े जो कि अंग्रेज़ों ने उठाये थे। जब अंग्रेज़ यहां से गये तो वे यह विचार करते थे कि देशी राज्य कांग्रेस सरकार के विरुद्ध विद्रोह करेंगे। किन्तु सरदार पटेल ने तथा उनके परामर्शदाताओं ने कांग्रेस की तथा देश की शक्ति से स्थिति को संभाला। उन्होंने कुछ राज्यों को प्रान्तों में समाविष्ट करके तथा कुछ के राज्य-संघ बनाकर सभी राज्यों को नया रूप दिया है तथा उनके अस्तित्व को मिटा दिया है। इस प्रकार उन्होंने एक अद्‌भुत कार्य कर दिखाया है। देशी राज्यों के मेरे मित्र यह न समझें कि उनको छोटा समझा जा रहा है और इस कारण वे स्वयं भी अपने को छोटा न समझें। इतिहास इसका प्रमाण है कि देशी राज्य प्रतिक्रिया तथा उत्पीड़न के गढ़ रहे हैं और यहां के लोग सदा पिछड़े हुए ही रहे हैं। इन सब दोषों को एक दो वर्ष में ही मिटाना कोई सरल कार्य नहीं है, किन्तु संविधान में इस की प्रत्याभूति दी गई है कि उनका स्तर उन 'ब्रिटिश भारतीय' प्रान्तों से निम्न नहीं है जिन का पिछले 70 वर्षों से कांग्रेस नेतृत्व करती रही है। देशी राज्यों को प्रान्तों के ही स्तर पर रखा गया है।

पृथक निर्वाचक-मंडलों के सम्बन्ध में भी अल्पसंख्यक समिति का सभापति होकर सरदार पटेल ने जो कार्य किया है वह उल्लेखनीय है। आप ही के समान सुयोग्य हमारे उपाध्यक्ष डॉ. एच.सी. मुकर्जी की इस देश की राष्ट्रीयता के प्रति सत्यनिष्ठा तथा उनकी सहायता के फलस्वरूप सरदार पटेल अल्पसंख्यकों के लिये पृथक निर्वाचक मंडलों की जो व्यवस्था थी उसे समाप्त कर सके हैं और इस प्रकार संविधान से ब्रिटिश साम्राज्य के उस अन्तिम अभिशाप को निकाल सके हैं।

[श्री थीरुमल राव]

देश में एकता स्थापित करने के उद्देश्य से हमने एक अन्य कदम यह उठाया है कि सभी सेनाओं को संगठित करके हमने उन्हें एक ही सेना का स्वरूप प्रदान कर दिया है। इसके अतिरिक्त भारतीय प्रशासन सेवा स्थापित करके हमने पुरानी अखिल भारतीय सेवा की परम्परा को बनाये रखा है और हमें आशा है कि उसका आचरण भ्रष्टता से मुक्त होगा। इस सुयोग्य सेवा द्वारा यह देश अपनी नीतियों को कार्यान्वित कर सकेगा। सरदार पटेल के सुयोग्य नेतृत्व में जो ये तीन संगठन स्थापित हुए हैं उनके फलस्वरूप देश में एकता स्थापित हो गई है। इन सभी विषयों के सम्बन्ध में इस संविधान में उपबन्ध रखे गये हैं।

भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस देश को स्वतन्त्र किया है और मुख्यत: उसी ने इस संविधान का मसौदा तैयार किया है। संविधान में कांग्रेस की विचार-धारा की ही अमिट छाप लगी हुई है। श्रीमान, कई मित्रों ने आपकी इन शब्दों में प्रशंसा की है कि आपने इस सभा के कार्य की अध्यक्षता करके संसदीय कार्य करने की निपुणता का यथेष्ट परिचय दिया है। सम्भवत: वे लोग कांग्रेस में नहीं रहे हैं और उन्हें आपके नेतृत्व का व्यक्तिगत अनुभव नहीं रहा है क्योंकि अन्यथा उन्हें ज्ञात होता कि आप दो बार कांग्रेस के प्रधान रहे हैं और आपने कई बार अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के उत्तेजना से परिपूरित अधिवेशनों के कार्य का संचालन किया है। अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की सुयोग्यता, कार्यक्षमता, देशभक्ति तथा संसदीय कार्य में दक्षता का परिचय इस सभा में भी मिल चुका है। श्रीमान, जब आप कांग्रेस के प्रधान रह चुके हैं तो हमें आपको इस सभा की अध्यक्षता का निर्वहन सुयोग्यता से कहने के लिये बधाई देने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि आपने यह कोई नवीन कार्य नहीं किया है। हमारे राजनीतिज्ञों के लिये भी शासन-कार्य कोई नवीन कार्य नहीं है क्योंकि उन्हें लोकनायक होने तथा जनमत का प्रतिनिधित्व करने का अनुभव रहा है। हमारे प्रधान मंत्री, उपप्रधान मंत्री तथा कांग्रेस के अनेक मंत्रियों ने मंत्रिपद का कार्य करके अपनी कार्यपटुता सिद्ध की है।

श्रीमान, मैं आंध्र प्रान्त की स्थापना के सम्बन्ध में जो निर्णय किया गया है उसके लिये अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूं और इस विषय में एक दो बातें कहना चाहता हूं क्योंकि इस ओर मैं सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। 1938 में, जब बाबू सुभाष बोस कांग्रेस के प्रधान थे, देशभक्त कोंडा वेंकटापय्या पांटूलू के नेतृत्व में हमारा एक प्रतिनिधि मण्डल जिसमें कुछ अन्य कांग्रेसी नेता भी थे, कांग्रेस कार्यकारिणी के समक्ष उपस्थित हुआ था जिसने आंध्रों को यह पवित्र आश्वासन दिया था कि भारतीय स्वातन्त्र्य का प्रश्न हल होते ही उन्हें आंध्र प्रान्त प्रदान कर दिया जायेगा। हमने प्रतिक्रिया का कभी भी आश्रय नहीं लिया। आंध्रों का सदा महात्मा गांधी के नेतृत्व में तथा कांग्रेस के नेतृत्व में अटल विश्वास रहा है। हमने कभी साइमन आयोग की खुशामद नहीं की। हमने उस आयोग का प्रत्येक कदम पर बायकाट किया जिससे लार्ड सायमन बहुत अप्रसन्न हो गये। ब्रिटिश सरकार ने यह विचार किया कि इस प्रान्त को स्थापित न करके वहां के निवासियों को कठोर दण्ड दे दिया गया है। किन्तु हमारा सदा कांग्रेस पर तथा कांग्रेस के नेतृत्व पर विश्वास रहा और हम इसके लिये आभारी हैं कि कांग्रेस कार्यकारिणी ने 1938 में एक प्रस्ताव द्वारा हमें जो वचन दिया था वह आज पूरा किया जा

रहा है। आप यह विचार न करें कि आंध्र प्रान्त का आन्दोलन 'दलित वर्ग' के आन्दोलन अथवा किसी अन्य गौण आन्दोलन के समान है। यह आन्दोलन राष्ट्रीयता के आन्दोलन का ही अंग है। कहा जाता है कि प्रशासन कार्य मातृ-भाषा में अथवा प्रादेशिक भाषा में किया जाना चाहिये किन्तु मद्रास में हम प्रशासन कार्य अंग्रेजी में करने में लिये विवश हैं क्योंकि उस प्रान्त में बिल्कुल भिन्न भाषा-भाषी चार प्रदेश हैं। यदि भारत के प्रत्येक प्रान्त का वास्तविक अर्थ में विकास करना है और लोकतन्त्र को प्रभावपूर्ण ढंग से व्यवहार में लाना है तो जनसाधारण में अंग्रेज़ी बोलने वालों का जो महत्व है उसे आपको मिटा देना चाहिये और करदाताओं तथा सरकार के बीच जो खाई है उसे पाट देना चाहिये।

वयस्क मताधिकार के सम्बन्ध में मेरा निवेदन है कि उससे मेरा उत्साह नहीं बढ़ता। वह एक दुधारी तलवार के समान है जो इस तरफ भी काटती है और उस तरफ भी। सौभाग्य से अथवा दुर्भाग्य से उसके सम्बन्ध में हमारे नेता वचनबद्ध थे क्योंकि आरम्भ में उन्होंने वयस्क मताधिकार पर आधृत संविधान सभा के निर्माण के लिये ही आन्दोलन किया था। वयस्क मताधिकार प्रदान करने से हमारे 17 करोड़ देशवासियों को मत देने का अधिकार प्राप्त हो जायेगा और उन सबके नाम निर्वाचन-सूचियों में लिखने होंगे। इस देश में यथेष्ट शिक्षा तथा यथेष्ट देशभक्ति का अभाव होने के कारण यह हथियार एक खतरनाक हथियार सिद्ध हो सकता है। गांधी जी के सत्याग्रह आन्दोलन से वास्तव में जनसाधारण प्रभावित नहीं हुए। उसने गांवों की केवल सीमा ही स्पर्श की। आखिर केवल चार पांच लाख लोग ही जेल गये थे, अर्थात् गांधी के आन्दोलन को केवल मध्यम वर्ग के सुपठित लोगों ने ही अंगीकार किया था। इससे हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि कितने लोगों में देशभक्ति की भावना जाग्रत हुई है। आपने देखा कि मेरे एक मित्र की जो इस सभा के सदस्य हैं, कितनी संकुचित भावना है। उन्होंने कहा कि वे उड़ीसा से अधिक दूरस्थ प्रदेश की कल्पना नहीं कर सकते। उन्हें पहले अपना घर प्रिय है, फिर अपना ग्राम प्रिय है, फिर अपना जिला प्रिय है और फिर अपना प्रान्त प्रिय है। उनकी कल्पना इतनी विस्तृत नहीं है कि वह पंडित जवाहरलाल नेहरू अथवा सरदार पटेल के नेतृत्व का मूल्य आंक सकें। यदि इस सभा के एक सुपठित सदस्य देशभक्ति से प्रेरित होकर अपने प्रान्त की सीमा के आगे किसी प्रदेश की कल्पना नहीं कर सकते तो उन करोड़ों अनपढ़ लोगों की कौन कहे जिनसे स्वार्थ-सेवी राजनैतिक नेता अपने समुदायों तथा उपसमुदायों की ही बात सोचने को कहते हैं? जिला बोर्डों के पिछले चुनावों में हमारे प्रान्तीय नेताओं ने इस आशय के वक्तव्य निकाले कि उप-समुदाय सम्बंधी भावनाओं को उभारा गया है और लोगों को सावधान रहना चाहिये। अब चूंकि निर्वाचन क्षेत्रों का बंटवारा होने लगा है इस लिये स्वार्थ-सेवी नेता इसका हिसाब लगाने लगे हैं कि अमुक अमुक निर्वाचन क्षेत्र में उसके समुदाय के अधिक मतदाता हैं या नहीं और अमुक राजनैतिक अखाड़िया देश के हितों के विरुद्ध नारे लगाकर उस निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित हो सकता है या नहीं। वयस्क मताधिकार के सम्बन्ध में मेरी इसी प्रकार की भावनायें हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि उसके सम्बन्ध में मुझे अपने उन मित्रों से कम उत्साह है जो वयस्क मताधिकार प्रदान करने की कसम खाये बैठे हैं। उसे अवश्य स्वीकार कीजिये किन्तु आगामी चार या पांच या दस वर्षों में धीरे-धीरे स्वीकार कीजिये। आज मतदाताओं की संख्या $3^{1}/_{2}$ करोड़ है। आगामी निर्वाचन में उनकी

[श्री थीरुमल राव]

संख्या दस करोड़ कर दीजिये और फिर उसके पश्चात् जो निर्वाचन हों उनमें उसे बढ़ा कर 17 करोड़ कर दीजिये। जब आप लोकतन्त्र के इस तथाकथित हथियार को प्रदान कर रहे हैं तो आपको स्मरण रखना चाहिये कि इस हथियार की दो धारें हैं। प्रश्न केवल निर्वाचक-मंडल का नहीं है और प्रश्न केवल विधान-मंडलों के उन सदस्यों का भी नहीं है जो वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होंगे। प्रश्न नेताओं का भी है। इस संविधान में सन्निहित सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने के लिये देश को सुयोग्य, अनुभवी, देशभक्त तथा निस्वार्थ नेताओं को आगे बढ़ाना होगा।

वास्तव में वर्तमान स्थिति को देखते हुए एक संघीय संविधान का निर्माण करना चाहते थे किन्तु हमने एक ऐसे संविधान का निर्माण किया है जो बहुत कुछ एकसत्तात्मक ही है। हमने सभी अवशिष्ट शक्तियां केन्द्रीय सरकार को ही प्रदान कर दी हैं और हम उसे अधिक से अधिक शक्तिशाली बनाने का प्रयास कर रहे हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि सभी राज्यों के होते हुए और देश के पेट में हैदराबाद के रूप में एक नासूर होते हुए—भले ही वह हाल में मिटा दिया गया हो—और हमारी सीमा पर, अर्थात कश्मीर में, खतरनाक स्थिति के होते हुए तथा इसे भी ध्यान में रखते हुए कि साम्यवादी शक्ति प्राप्त करने के लिये किसी भी साधन और अपने सभी साधनों का उपयोग करना चाहते हैं और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लोग भारतीय संस्कृति तथा हिंदुत्व का लोकप्रिय नारा लगा कर राजनैतिक शक्ति पर अपना अधिकार करना चाहते हैं, यदि केन्द्रीय सरकार का स्वरूप सावधानी से निश्चित नहीं किया गया तो बहुत खतरा उठाना पड़ेगा। इन सभी बातों को देखते हुए हमारे नेताओं ने अपने पिछले अनुभव के आधार पर तथा भविष्य की यथोचित कल्पना के आधार पर यह कहा है कि इस राष्ट्र की अवशिष्ट शक्तियां एक ऐसी सरकार को प्रदान करनी चाहियें जिसका केन्द्र सुदृढ़ हो। इसके अतिरिक्त इस संविधान का प्रभावपूर्ण होना एक व्यक्ति पर भी, अर्थात इस देश के प्राधानमंत्री पर भी निर्भर है जिसे सर्वशक्तिमान बनाया गया है। इस संविधान को कार्यान्वित करने के लिये आपने केन्द्रीय विधान मंडल के बहुसंख्यक दल के नेता को हर प्रकार की शक्ति प्रदान की है। इस लोकतन्त्रात्मक संविधान को व्यवहार में लाना प्रधानमंत्री पर ही निर्भर है और इस कारण उसे बहुत शक्तियां प्रदान की गई हैं। यद्यपि कांग्रेस ने इस देश को स्वतन्त्र किया, और यद्यपि इस देश के शासन को चलाने वाला बहुसंख्यक दल भी कांग्रेस दल ही है, किन्तु वह इतना क्षुद्र अथवा कुचक्री नहीं कि वह संविधान में कोई ऐसा उपबन्ध रखता जिससे कुछ समय तक उसकी शक्ति बनी रहती। उसने अपने स्वार्थ को आगे नहीं रखा और एक ऐसे संविधान का निर्माण किया जिसके आधार पर देश का कोई ऐसा दल जिसे देश में लोगों का सबसे अधिक समर्थन प्राप्त हो शक्ति ग्रहण कर सकता है। और अपनी इच्छानुसार प्रशासन चला सकता है। किन्तु फिर भी हमारा विश्वास है कि संविधान में हमारे प्रधानमंत्री तथा उपप्रधानमंत्री की अमिट छाप लगी हुई है और करोड़ों लोगों की यही आशा है कि वे बहुत वर्ष तक हमारे बीच में रहेंगे और इसकी चिंता करेंगे कि हमारे राष्ट्र ने जो शक्ति प्राप्त की है उसका एकीकरण इस प्रकार किया जायेगा कि उससे देश के गरीब लोगों का हितसाधन होगा क्योंकि इस संविधान द्वारा उनकी रक्षा का आश्वासन दिया गया है।

मूलाधिकारों के सम्बन्ध में मुझे अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्रत्येक अधिकार परमाधिकार नहीं है। जहां कहीं किसी अधिकार का उपयोग किया जाता है वह लोक नीति, लोकाचार तथा राज्य की सुरक्षा को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकार को प्रयोग करना चाहे और उनसे लाभ उठाना चाहे और राज्य के हितसाधन के हेतु किसी जिम्मेदारी को स्वीकार न करना चाहे तो उसे उसी जगह रखना चाहिये जहां इस प्रकार के व्यक्ति को रखा जाना चाहिये। केवल यही अपवाद है। मूलाधिकारों के सम्बन्ध में इस संविधान में किसी स्थल पर पूर्ण व्यवस्था नहीं की गई है? इस संविधान के अधीन सभी लोग अपनी वृत्ति और व्यवसाय को शान्तिपूर्वक कर सकेंगे। उन्हें यह प्रत्याभूति दी गई है कि ऐसे लोग जो अन्य लोगों का शोषण करके अत्यधिक अधिकारों का अनुचित प्रयोग करते हैं उनके काम में हस्तक्षेप नहीं कर सकेंगे।

इस सम्बन्ध में मैं एक घटना की चर्चा करूंगा। कुछ समय पूर्व मद्रास में होने वाले नागरिक स्वातन्त्र्य सम्मेलन का सभापतित्व करते हुए पटना के उच्च न्यायालय के एक भूतपूर्व न्यायाधीश ने जब केन्द्र से लेकर प्रान्तों तक की सभी कांग्रेस सरकारों की आलोचना की तो मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। नागरिक-स्वातन्त्र्य के नाम पर सरकारों की आलोचना करते हुए वे वास्तव में अपनी बुद्धि खो बैठे। उनके भाषण में सुस्थापित सरकारों को बहुत गालियां दी गईं। साम्यवादियों ने उससे उद्धरण दिये हैं। नागरिक स्वातन्त्र्य की चर्चा करते हुए साम्यवादी भी इतना उग्र भाषण नहीं देते जितना उग्र भाषण पटना के उच्च-न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश ने दिया था। यह कोई नागरिक स्वातन्त्र्य नहीं है। प्रत्येक नागरिक को देश में शांति बनाये रखने के लिए अपनी भी कुछ जिम्मेदारी समझनी चाहिये। जब लोग अपनी जिम्मेदारी को समझेंगे तभी वे स्वतन्त्रता के फलों का उपभोग कर सकेंगे। आपको नागरिक स्वातंत्र्य के ऐसे समर्थकों को, जो जीवन भर विदेशी प्रभुओं की नौकरी करके निवृत्त होने पर नागरिक स्वतंत्रताओं का बड़े जोश-खरोश से समर्थन करते हैं, मनमाने ढंग से नहीं बोलने देना चाहिये। उन्हें आपको यह बताना चाहिये कि राज्य के प्रति भी उनकी कुछ जिम्मेदारी है।

श्रीमान, यद्यपि मैं एक बात और कहना चाहता हूं किन्तु मैं अब सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता। वर्तमान स्थिति में जो लोग इस संविधान को विधान-मंडलों के सदस्यों तथा उनके चुने हुए मंत्रियों द्वारा कार्यान्वित करायेंगे, उसका बहुत सदुपयोग कर सकते हैं। मैं यह कहूंगा कि इस संविधान से अधिक से अधिक लाभ उठाना आगामी कुछ वर्षों तक प्रधान-मंत्रियों पर ही निर्भर है। श्रीमान, हमने अशोक काल की ऐतिहासिक देन, अर्थात चक्र को अपने राष्ट्र का ठीक ही प्रतीक चुना है। इस चक्र का अर्थ बताते हुए एक प्रख्यात प्राच्य-वेत्ता रिस डेविस ने कहा है कि इस चक्र का उद्देश्य यह है कि संसार में सत्य और सदाचार के विश्व-सामंज्य के शाही रथ का चक्र गतिशील हो उठे। यदि कोई देश उन सारभूत नैतिक सिद्धान्तों का परित्याग करता है जिन्हें उसने अपना आधार स्वीकार किया है तो उसका भविष्य अंधकारमय ही समझिये। इस देश ने अपने प्राचीन आदर्शों तथा परम्परा का ध्यान रखकर उस चक्र को अपना प्रतीक चुन कर ठीक ही कदम उठाया है जो अशोक का धर्म-चक्र है और जिसे महात्मा गांधी का आशीर्वाद

[श्री थीरुमल राव]

प्राप्त है। इसे ध्यान में रखकर कि उनकी आत्मा इस राष्ट्र का संरक्षण कर रही है और हमारी पताका पर यह प्रतीक है, इस सभा का तथा भविष्य के नेताओं का यह कर्तव्य हो जाता है और कि वे कांग्रेस के सिद्धान्तों को व्यवहार में लायें और इस राष्ट्र के भविष्य को उज्ज्वल बनायें।

———————

इसके पश्चात् सभा बुधवार तारीख 23 नवम्बर, 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

———————

GIPD–HS-319 PSD–17-1-53–320